दृष्टि The Vision

एडिटोरियल

(संग्रह)

जून भाग-2

2021

दृष्टि, 641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009

फोन: 8750187501

ई-मेल: online@groupdrishti.com

अनुक्रम

संवैधानिक/प्रशासनिक घटनाक्रम **5**

- भारतीय चुनाव फंडिंग प्रणाली 5
- लोकतंत्र में सोशल मीडिया की भूमिका 6
- UAPA एवं संवैधानिक स्वतंत्रता 7
- संघ बनाम केंद्र 9
- भूल जाने का अधिकार 10

आर्थिक घटनाक्रम **13**

- 1991 के आर्थिक सुधार एवं 2021 का संकट 13
- अवसंरचना निर्माण में विकास वित्तीय संस्थान की भूमिका 15

नोट :

अंतर्राष्ट्रीय घटनाक्रम **17**

- वैश्विक न्यूनतम कर 17

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी **19**

- वैश्विक न्यूनतम कर 17

भूगोल एवं आपदा प्रबंधन **21**

- विद्युत क्षेत्र में सुधार 21

सामाजिक न्याय **23**

- पितृसत्ता की भूमिका और धर्म 23
- लैंगिक अल्पसंख्यकों का हाशियाकरण 24
- जनसंख्या नियंत्रण : एक दोधारी तलवार 26

नोट :

नोट :

संवैधानिक/प्रशासनिक घटनाक्रम

भारतीय चुनाव फंडिंग प्रणाली

संदर्भ

लोकतंत्र में सैद्धांतिक रूप से राजनीतिक शक्तियाँ लोकप्रियता के आधार पर या जनता की स्वीकृति से प्रवाहमान होती है, जिसे कि चुनावों के परिणामों से जाना जाता है। हालाँकि व्यवहार में यह प्रणाली अक्सर कई कारकों से विकृत होती है, जिनमें वित्तीय शक्ति सबसे प्रमुख होती है।

- इस कारण राजनीतिक दल अपने मतदाताओं की इच्छा के अनुसार नहीं बल्कि उन्हें चुनाव हेतु वित्त उपलब्ध कराने वालों के अनुसार नीति बनाते हैं।
- इसके अलावा, सरकार ने विदेशी अंशदान (विनियमन) अधिनियम (FCRA), 1976, कंपनी अधिनियम, 2013 में कई कानूनी बदलाव लाए हैं, जो चुनावों में गुमनाम कॉर्पोरेट फंडिंग के प्रभाव को बढ़ावा दे सकते हैं।
- इसके साथ ही राजनीतिक फंडिंग में पारदर्शिता की कमी चिंता का कारण है और चुनावी बॉण्ड ने इस स्थिति को और खराब कर दिया है। पिछले कुछ समय में हुए बदलाव S3 भारत की चुनावी फंडिंग प्रणाली में अधिक समस्याएँ पैदा हो गई हैं, जिससे ऐसे हित समूहों, जिनके पास धन बल है, राजनीतिक दलों को गुप्त रूप से प्रभावित करने की क्षमता रखते हैं।

भारत की चुनावी फंडिंग प्रणाली से संबंधित मुद्दे

- चुनावी बॉण्ड: 2017 में चुनावी बॉण्ड की शुरूआत ने बिना नाम या पहचान जारी किये हजारों करोड़ दान देने के लिये नया मार्ग खोल दिया।
  - चुनावी बॉण्ड योजना के तहत, भारतीय स्टेट बैंक (SBI) के माध्यम से केवल सत्ताधारी पार्टी के पास चुनावी बॉण्ड के माध्यम से किये जा रहे सभी दान का पूरा लेखा-जोखा होता है।
  - संसद, चुनाव आयोग और विपक्षी दलों के पास यह जानकारी नहीं है और न ही जनता को।
  - वास्तव में चुनावी बॉण्ड कंपनियों, धनी व्यक्तिगत दान कर्त्ताओं और विदेशी संस्थाओं को अप्रत्यक्ष रूप से राजनीतिक शक्ति प्रदान करते हैं। इस प्रकार एक मतदाता-एक वोट के सार्वभौमिक मताधिकार कमज़ोर होता है।
- FCRA, 1976 में संशोधन: वर्ष 2014 में दिल्ली उच्च न्यायालय ने माना कि दो राष्ट्रीय राजनीतिक दल भारत में पंजीकृत दो कंपनियों से अवैध रूप से चंदा स्वीकार करने के दोषी थे, लेकिन उन कंपनियों के नियंत्रक शेयरधारक एक विदेशी कंपनी थी।
  - वर्ष 2016 एवं 2018 में, सरकार ने इससे जुड़े उल्लंघनों को पूर्वव्यापी रूप से वैध बनाने के लिये, वार्षिक वित्त विधेयकों के माध्यम से FCRA में संशोधन किया।
  - संशोधन के अनुसार, पहले विदेशी कंपनियाँ या ऐसी कंपनियाँ जिसकी मूल कंपनी विदेश में स्थित हो, वे दान नही कर सकती थीं किंतु, संशोधन के पश्चात वे ऐसा कर सकती हैं।
  - भारतीय निर्वाचन आयोग के अनुसार, इससे भारत में राजनीतिक दलों को अनियंत्रित विदेशी वित्त पोषण की अनुमति मिल जाती है, जिससे भारत की संप्रभुता प्रभावित हो सती है साथ ही, भारत की नीतियाँ विदेशी कंपनियों से प्रभावित हो सकती हैं।
- कंपनी अधिनियम, 2013 में संशोधन: वर्ष 2017 के वित्त विधेयक ने राजनीतिक दलों को प्राप्त दान को अलग-अलग शीर्षक के अंतर्गत घोषित करने की आवश्यकता को दूर करने के लिये कंपनी अधिनियम 2013 की धारा 182 में संशोधन किया।
  - पहले केवल लाभ कमाने वाली घरेलू कंपनियाँ ही राजनीतिक दलों को योगदान दे सकती थीं; अब घाटे में चल रही कंपनियाँ भी ऐसा कर सकती हैं।
  - इसके अलावा, राजनीतिक दलों को कॉर्पोरेट चंदे की अधिकतम सीमा 7.5% को हटा दिया गया है।
  - इस संशोधन के साथ कंपनियाँ कोई भी राशि दान करने के लिये स्वतंत्र हैं एवं किसे दान किया गया इसे घोषित करने के लिये उत्तरदायी नहीं हैं।

नोट :

- आरटीआई प्रभाव को रद्द करना: वर्ष 2005 का सूचना का अधिकार (आरटीआई) अधिनियम सार्वजनिक प्राधिकरणों द्वारा रखी जाने वाली जानकारी तक पहुँच को आसान बनाता है। भले ही राजनीतिक दल सूचना के अधिकार (RTI) के दायरे में आते हों लेकिन उपरोक्त परिवर्तनों के कारण पारदर्शिता नकारात्मक रूप से प्रभावित होगी ।

आगे की राह

- चुनावी बॉण्ड में पारदर्शिता: भले ही सुप्रीम कोर्ट ने चुनावी बॉण्ड की संवैधानिकता को बरकरार रखा हो, लेकिन यह पारदर्शिता और जवाबदेही को बनाए रखने के लिये इसके पूर्ण और वास्तविक समय में प्रकटीकरण का आदेश दे सकता है।
- नैतिक दायित्व: कंपनियाँ और राजनीतिक दल नैतिक दायित्व को समझते हुए स्वेच्छा से प्राप्तकर्ताओं और दान कर्त्ताओं की पहचान का खुलासा कर सकते हैं, जैसा कि झारखंड मुक्ति मोर्चा ने हाल ही में किया था।
- राज्य द्वारा चुनावों का वित्त पोषण: कई उन्नत देशों में, चुनावों का सार्वजनिक रूप से वित्त पोषण किया जाता है। इससे समानता के सिद्धांत सुनिश्चित होते हैं और सत्ता- पक्ष एवं विपक्ष के बीच संसाधनों की आपूर्ति में बहुत अधिक अंतर नहीं रहता है।
  - द्वितीय एआरसी, दिनेश गोस्वामी समिति, और कई अन्य ने भी चुनावों के लिये राज्य द्वारा वित्त पोषण की सिफारिश की है।
  - इसके अलावा, जब तक चुनावों को सार्वजनिक रूप से वित्त पोषित नहीं किया जाता है, तब तक राजनीतिक दलों के वित्तीय योगदान पर सीमाएँ लागू की जा सकती हैं।
- नागरिक संस्कृति की ओर: भारत लगभग 75 वर्षों से लोकतंत्र के रूप में अच्छी तरह से कार्य कर रहा है। अब सरकार को और अधिक जवाबदेह बनाने के लिये मतदाताओं को स्वयं जागरूक होकर स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव के सिद्धांत का उल्लंघन करने वाले उम्मीदवारों और पार्टियों को खारिज़ करना चाहिये।

निष्कर्ष

प्रत्येक वोट समान रूप से मूल्यवान नहीं है यदि कंपनियाँ छिपे हुए दान के माध्यम से नीतियों को प्रभावित कर सकती हैं। इस व्यवस्था का विजेता सत्तारूढ़ दल होता है, चाहे वह केंद्र में हो या राज्य में और हारती है जनता।

लोकतंत्र में सोशल मीडिया की भूमिका

संदर्भ

कोविड -19 महामारी के दौरान हमने देखा कि कैसे सोशल मीडिया के जरिए आम नागरिक एक दूसरे की सहायता कर सकते हैं एवं संकट से निपटने में आधुनिक सरकारी प्रयासों के पूरक हो सकते हैं।

- दुनिया भर में सोशल मीडिया लोगों के लिये सरकार के कामकाज में अपनी भागीदारी सुनिश्चित करने एवं आवाज़ उठाने के लिये एक बेहतर प्लेटफॉर्म बनकर उभरा है। इसके जरिये समकालीन मुद्दों पर चर्चा करना, किसी घटना के कारण एवं परिणामों पर चर्चा और नेताओं को जवाबदेह ठहराना आसान हो गया है।
- हालाँकि इसकी अनिश्चित प्रकृति, अफवाहों को हवा देना, गलत समाचारों के प्रसार में इसकी भूमिका के कारण, सोशल मीडिया किसी खास एजेंडा को प्रसारित करने, कुछ विशेष वर्गों को लक्षित करने, चुनी हुई सरकारों को अस्थिर करने एवं लोकतंत्र के मूल्यों से समझौता करने की दिशा की तरफ भी ले जाता है।
- सोशल मीडिया को इस तरह से विनियमित करने की आवश्यकता है, जो अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, अल्पसंख्यकों के हित, कानून और व्यवस्था के बीच संतुलन बनाए तथा शासन में नागरिकों की भागीदारी को बढ़ावा दे।

लोकतंत्र पर सोशल मीडिया का सकारात्मक प्रभाव

- डिजिटल लोकतंत्र: लोकतांत्रिक मूल्य तभी विकसित हो सकते हैं जब लोगों के प्राप्त अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता हो। इस तरह सोशल मीडिया स्वतंत्रता के इन मंचों के माध्यम से डिजिटल लोकतंत्र की अवधारणा को मजबूत करता है।
- जवाबदेही तय करना: सोशल मीडिया एक ऐसे प्लेटफॉर्म के रूप में कार्य करता है जहाँ अजेय प्रतीत होने वाली सरकारों पर भी सवाल उठाया जा सकता है, उनकी जवाबदेही तय कर सकता है एवं लोगों के एक-एक वोट द्वारा परिवर्तन ला सकता है।

नोट :

- लोगों की आवाज़ को मजबूत करना: सोशल मीडिया में लोगों तक सूचना पहुँचाने की शक्ति है। ट्यूनीशिया जैसे देशों में सोशल मीडिया ने 'अरब स्प्रिंग' में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसे मुक्ति पाने के लिये एक तकनीक के रूप में इस्तेमाल किया गया था।
- नागरिकों का एक दूसरे से जुड़ाव: नागरिक जुड़ाव के लिये सोशल मीडिया के निहितार्थ बहुत गहरे हैं क्योंकि बहुत से लोग इन प्लेटफार्मों पर समाचारों पर चर्चा एवं समकालीन मुद्दों पर बहस करते हैं।
  - इस तरह लोग अपने तरह के लोगों से जुड़ते हैं एवं उनमें एक समुदाय की भावना मजबूत होती है।

लोकतंत्र पर सोशल मीडिया का नकारात्मक प्रभाव

- राजनीतिक ध्रुवीकरण: सोशल मीडिया की सबसे आम आलोचनाओं में से एक यह है कि यह 'ईको चेंबर' (Echo Chamber) बनाता है जहाँ लोग केवल उन दृष्टिकोणों से चीजों एवं घटनाओं को देखते हैं, जिनसे वे सहमत होते हैं और जिनसे असहमत होते हैं उन्हें सिरे से खारिज़ कर देते हैं।
  - चूंकि अभूतपूर्व संख्या में लोग अपनी राजनीतिक ऊर्जा को इस माध्यम से प्रसारित करते हैं, इसके उपयोग से अप्रत्याशित तरीकों से ऐसे सामाजिक परिणाम सामने आ रहे हैं जिनकी कभी उम्मीद नहीं की गई थी।
- प्रोपेगैंडा फैलाना: गूगल ट्रांसपेरेंसी रिपोर्ट के अनुसार, राजनीतिक दलों ने पिछले दो सालों में ज़्यादातर चुनावी विज्ञापनों पर करीब 80 करोड़ डॉलर (5,900 करोड़ रुपये) खर्च किये हैं।
  - इसके जरिये नफरत एवं सांप्रदायिकता से भरे भाषणों को आसानी से फैलाया जा सकता है।
- विदेशी हस्तक्षेप: ऐसा माना जाता है कि वर्ष 2016 के अमेरिकी के चुनाव के दौरान रूसी संस्थाओं ने सोशल मीडिया को सूचना के हथियार के रूप में उपयोग किया एवं सार्वजनिक रूप से लोगों की भावनाओं को प्रभावित करने के लिये फेसबुक पर नकली पेज बनकर प्रचार किया।
  - इस तरह सोशल मीडिया को राष्ट्र, राज्य एवं समाज को विभाजित करने के इरादे से साइबर युद्ध के लिये उपयोग किया जा सकता है।
- फेक न्यूज़: सोशल मीडिया लोगों को अपनी बात रखने का पर्याप्त मौका देता है। कभी-कभी जिसका इस्तेमाल किसी के द्वारा अफवाह फैलाने और गलत सूचना फैलाने के लिये भी किया जा सकता है।
- असमान भागीदारी: सोशल मीडिया नीति निर्माताओं की जनमत के बारे में धारणा को प्रभावित करता है। ऐसा इसलिये है क्योंकि ऐसा माना जाता है कि सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म जीवन के हर क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करते हैं, लेकिन हर कोई इस प्लेटफॉर्म का समान रूप से उपयोग नहीं कर रहा है।

निष्कर्ष

अगर लोकतंत्र पर सोशल मीडिया के प्रभाव के बारे में कोई सच्चाई है तो वह यह है कि यह मानवीय गुणों, सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों गुणों, को बढ़ावा देता है। अपने सबसे अच्छे रूप में यह हमें खुद को व्यक्त करने और खुद को बेहतर बनाने का मौका देता है। सबसे बुरी स्थिति में यह लोगों को गलत सूचना फैलाने और लोकतंत्र के मूल्यों को नष्ट करने के रास्ते खोलता है।

UAPA एवं संवैधानिक स्वतंत्रता

संदर्भ

हाल ही में दिल्ली उच्च न्यायालय ने वर्ष 2020 के दिल्ली दंगों में कथित भूमिका के लिये तीन कार्यकर्त्ताओं को जमानत दी। ज्ञातव्य है कि ये आरोपी बिना किसी मुकदमे के एक वर्ष से अधिक समय से जेल में थे।

यह निर्णय इसलिये महत्त्वपूर्ण है क्योंकि उपर्युक्त आरोप गैरकानूनी गतिविधि रोकथाम अधिनियम (Unlawful Activities Prevention Act-UAPA), 1967 के तहत लगाए गए थे। नागरिक समाज द्वारा UAPA की आलोचना की जाती है। उनका तर्क है कि यह संविधान द्वारा प्राप्त असहमति की स्वतंत्रता, विधि के शासन और निष्पक्ष परीक्षण के विरुद्ध है।

UAPA कानून

- मूल रूप से UAPA को वर्ष 1967 में लागू किया गया था। इसे वर्ष 2004 और वर्ष 2008 में आतंकवाद विरोधी कानून के रूप में संशोधित किया गया था।

नोट :

- अगस्त 2019 में संसद ने कुछ आधारों पर व्यक्तियों को आतंकवादी के रूप में नामित करने के लिये UAPA (संशोधन) बिल, 2019 को मंजूरी दी।
- आतंकवाद से संबंधित अपराधों से निपटने के लिये यह सामान्य कानूनी प्रक्रियाओं से अलग होता है और इसके नियम सामान्य अपराधों के नियमों से अलग हैं। जहाँ अभियुक्तों के संवैधानिक सुरक्षा उपायों को कम कर दिया जाता है।
- राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (एनसीआरबी) द्वारा प्रकाशित एक आँकड़े के अनुसार, वर्ष 2016 एवं वर्ष 2019 के मध्य (जिस अवधि के लिये UAPA के आँकड़े प्रकाशित किये गए हैं।) UAPA की विभिन्न धाराओं के तहत कुल 4,231 प्राथमिकी दर्ज की गईं, जिनमें से 112 मामलों में अपराध सिद्ध हुआ है।
- UAPA के तहत लगातार आवेदन इंगित करता है कि भारत में अतीत में अन्य आतंकवाद विरोधी कानूनों जैसे पोटा (आतंकवाद रोकथाम अधिनियम) और टाडा (आतंकवादी और विघटनकारी गतिविधियां (रोकथाम) अधिनियम) की तरह इसका अक्सर दुरुपयोग किया जाता है।

UAPA से संबंधित मुद्दे

- आतंकवादी गतिविधियों की अस्पष्ट परिभाषा: UAPA के तहत "आतंकवादी गतिविधि" की परिभाषा आतंकवाद का मुकाबला करते हुए मानवाधिकारों और मौलिक स्वतंत्रता के संरक्षण पर संयुक्त राष्ट्र (यूएन) के विशेष प्रतिवेदक द्वारा प्रचारित परिभाषा से काफी भिन्न है। किसी अपराध को "आतंकवादी कृत्य" कहने के लिये विशेष प्रतिवेदक के अनुसार, तीन तत्वों का एक साथ होना आवश्यक है:
  - आपराधिक कृत्य में उपयोग किये गए साधन घातक होने चाहिये;
  - कृत्य के पीछे की मंशा समाज के लोगों में भय पैदा करना या किसी सरकार या अंतर्राष्ट्रीय संगठन को कुछ करने या कुछ करने से परहेज करने के लिये मजबूर करना होना चाहिये; तथा
  - उद्देश्य एक वैचारिक लक्ष्य को आगे बढ़ाना होना चाहिये।
  - दूसरी ओर, UAPA "आतंकवादी गतिविधियों" की व्यापक और अस्पष्ट परिभाषा प्रदान करता है जिसमें किसी व्यक्ति की मृत्यु या चोट लगना, किसी भी संपत्ति को नुकसान पहुंचाना आदि भी शामिल है।
- जमानत से इंकार: UAPA के साथ बड़ी समस्या इसकी धारा 43 (D) (5) में निहित है। यदि पुलिस किसी व्यक्ति के लिये UAPA के अंतर्गत आरोप पत्र दायर करती है एवं यह मानने के लिये उचित आधार हैं कि प्रथम दृष्टया आरोप सत्य है तो व्यक्ति को जमानत मिलना मुश्किल होता है जबकि, जमानत स्वतंत्रता के संवैधानिक अधिकार की सुरक्षा और गारंटी है।
- लंबित मुकदमे: भारत में न्याय वितरण प्रणाली की स्थिति को देखते हुए, लंबित मुकदमे की दर औसतन 95.5 प्रतिशत है।
  - इसका मतलब यह है कि हर साल 5 प्रतिशत से कम मामलों में मुकदमा पूरा चलाया जाता है, जिस कारण आरोपियों को लंबे समय तक कारावास में रहना पड़ता है।
- स्टेट ओवररीच: इसमें "धमकी देने की भावना" या "लोगों में आतंक का डर पैदा करने" जैसा कोई भी कार्य शामिल है, जो सरकार को इन कृत्यों के आधार पर किसी भी सामान्य नागरिक या कार्यकर्त्ता को आतंकवादी साबित करने के लिये असीमित शक्ति प्रदान करता है।
  - यह राज्य प्राधिकरण को अप्रत्यक्ष रूप से उन व्यक्तियों को हिरासत में लेने और गिरफ्तार करने की शक्ति देता है, जिनके बारे में यह मानता है कि वे आतंकवादी गतिविधियों में शामिल थे।
  - इस प्रकार राज्य खुद को संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत गारंटीकृत व्यक्तिगत स्वतंत्रता की तुलना में अधिक अधिकार देता है।
- संघवाद के महत्त्व को कम आँकना: यह देखते हुए कि 'पुलिस' भारतीय संविधान की 7वीं अनुसूची के तहत राज्य का विषय है। कुछ विशेषज्ञों का मानना है कि यह संघीय ढाँचे के खिलाफ है क्योंकि यह आतंकवाद के मामलों में राज्य पुलिस के अधिकार की उपेक्षा करता है।

फैसले का महत्त्व

- आतंकवादी कृत्यों का दायरा सीमित करना: अदालत के फैसले में कहा गया है कि चूकि UAPA आतंकवादी अपराधों से निपटने के लिये है, इसलिये इसके अंतर्गत आरोप पत्र उन कृत्यों तक ही सीमित होना चाहिये जो "आतंकवाद" की व्यावहारिक समझ के भीतर उचित रूप से शामिल होते हैं।

नोट :

- संवैधानिक स्वतंत्रता की पुष्टि: इस वर्ष की शुरुआत में, भारत संघ बनाम के. ए. नजीब (2021) मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि UAPA के तहत जमानत पर प्रतिबंध के बावजूद, संवैधानिक अदालतें अभी भी इस आधार पर जमानत दे सकती हैं कि अभियुक्तों के मौलिक अधिकारों का उल्लंघन किया गया है।
  - न्यायालय ने कहा कि UAPA जमानत पर प्रतिबंधों के प्रावधान की कठोरता "जहाँ उचित समय के भीतर सुनवाई पूरी होने की कोई संभावना नहीं है" वहाँ कम हो जाएगी।
  - दिल्ली उच्च न्यायालय ने इस तर्क को एक कदम आगे बढ़ाते हुए कहा कि अदालतों के लिये यह वांछनीय नहीं होगा कि वे तब तक प्रतीक्षा करें जब तक कि अभियुक्तों के शीघ्र मुकदमे के अधिकार पूरी तरह से समाप्त न हो जाएं, इससे पहले उन्हें स्वतंत्रता मिलनी चाहिये।

निष्कर्ष

'व्यक्तिगत स्वतंत्रता' और राज्य द्वारा 'सुरक्षा प्रदान करने' के दायित्व के मध्य रेखा खींचना दुष्कर कार्य है। संवैधानिक स्वतंत्रता एवं आतंकवाद विरोधी गतिविधियों के विरुद्ध कार्रवाई संतुलन बनाना राज्य, न्यायपालिका एवं नागरिक समाज पर निर्भर है।

संघ बनाम केंद्र

संदर्भ

हाल ही में तमिलनाडु सरकार ने अपने आधिकारिक पत्राचार या संचार में 'केंद्र सरकार' (Central Government) शब्द के उपयोग को बंद करने एवं इसके स्थान पर 'संघ सरकार' (Union Government) का उपयोग करने का फैसला किया है।

- मूल संविधान के 22 भागों में 395 अनुच्छेदों और आठ अनुसूचियों को पढ़ने के बाद यह कहा जा सकता है कि 'केंद्र' या 'केंद्र सरकार' शब्द का उपयोग कहीं भी नहीं किया गया है।
- भले ही मूल संविधान में 'केंद्र सरकार' का कोई उल्लेख नहीं है, लेकिन 'General Clauses Act, 1897' इसे परिभाषित करता है।
- इसलिये सवाल यह है कि क्या 'केंद्र सरकार' की ऐसी परिभाषा संवैधानिक है क्योंकि संविधान ही सत्ता के केंद्रीकरण को मंजूरी नहीं देता है।

उत्पत्ति: संघ सरकार और केंद्र सरकार

- ब्रिटिश शासन के तहत गवर्नर जनरल द्वारा चलाए जाने वाले प्रशासन को अक्सर "केंद्र सरकार" के रूप में वर्णित किया जाता था।
- उदाहरण के लिये वर्ष 1919 में, जब ब्रिटेन की संसद द्वारा नए भारत सरकार अधिनियम को पारित किया गया, जो भारत में स्वशासन और संघवाद का एक प्रारंभिक रूप पेश करता था। इसके तहत शक्तियों को "केंद्रीय" और "प्रांतीय" विषयों के बीच विभाजित किया गया था।
- आधुनिक शब्द "संघ" का पहली बार आधिकारिक तौर पर वर्ष 1946 में कैबिनेट मिशन प्लान द्वारा इस्तेमाल किया गया था, जो सत्ता के हस्तांतरण के बाद भारत को एकजुट रखने के लिये एक ब्रिटिश योजना थी।
- संविधान सभा के कई सदस्यों की राय थी कि ब्रिटिश कैबिनेट मिशन योजना (वर्ष 1946) के सिद्धांतों को अपनाया जाए।
- कैबिनेट मिशन ने बहुत सीमित शक्तियों वाली केंद्र सरकार जबकि प्रांतों के पास पर्याप्त स्वायत्तता देकर एक तरह से संघ सरकार बनाने का विचार दिया था।
- हालाँकि कश्मीर में वर्ष 1947 के विभाजन और हिंसा ने संविधान सभा को अपने दृष्टिकोण को संशोधित करने के लिये मजबूर किया और इसके पश्चात एक मज़बूत केंद्र के पक्ष में विचार किया जाने लगा।
- इसके कारण संघ से राज्यों के अलग होने की संभावना को देखते हुए संविधान के निर्माणकर्त्ताओं ने यह सुनिश्चित किया कि भारतीय संघ "अविनाशी" होगा।
- इस प्रकार भारतीय संविधान के अनुच्छेद 1 में कहा गया है कि "भारत, अर्थात् इंडिया, राज्यों का संघ होगा।" ("India, that is Bharat, shall be a Union of States")।

नोट :

संघ और केंद्र के मध्य अंतर

- संविधान विशेषज्ञ सुभाष कश्यप के अनुसार, शब्दों के प्रयोग की दृष्टि से 'केंद्र' एक वृत्त के मध्य में एक बिंदु को इंगित करता है, जबकि 'संघ' संपूर्ण वृत्त है।
- भारत में संविधान के अनुसार, तथाकथित 'केंद्र' और राज्यों के बीच का संबंध वास्तव में 'संपूर्ण और उसके भागों के मध्य का संबंध' है।
- संघ और राज्यों के बीच शक्तियों का बँटवारा सरकार के कार्यकारी अंग तक ही सीमित नहीं है, यह सरकार के अन्य अंगों में भी दृष्टव्य है।
- उदाहरण के लिये, न्यायपालिका को संविधान में यह सुनिश्चित करने के लिये बनाया गया है कि सर्वोच्च न्यायालय, देश की सबसे ऊँची अदालत, का उच्च न्यायालय पर कोई अधीक्षण नहीं है।
- यद्यपि सर्वोच्च न्यायालय का अपीलीय क्षेत्राधिकार है - न केवल उच्च न्यायालयों पर बल्कि अन्य न्यायालयों और न्यायाधिकरणों पर भी तथापि उन्हें सर्वोच्च न्यायालय के अधीनस्थ घोषित नहीं किया जाता है।
- वास्तव में उच्च न्यायालयों के पास जिला और अधीनस्थ न्यायालयों पर अधीक्षण की शक्ति होने के बावजूद विशेषाधिकार रिट जारी करने की शक्तियाँ सर्वोच्च न्यायालय की तुलना में व्यापक हैं।
- संसद और विधानसभाएँ अपनी अधिकार सीमाओं की पहचान करती हैं और जब उन विषय वस्तुओं पर कानून बनाए जाते हैं तो ये सीमाएँ पार न हों, इसका ध्यान रखते हैं।

केंद्र सरकार शब्द के साथ जुड़े मुद्दे

- संविधान सभा द्वारा खारिज़: संविधान में 'केंद्र' शब्द का प्रयोग नहीं किया गया है; संविधान निर्माताओं ने इसे विशेष रूप से खारिज़ कर दिया और इसके बजाय 'संघ' शब्द का प्रयोग किया।
- बी. आर. अम्बेडकर ने स्पष्ट किया कि "संघ और राज्य दोनों संविधान द्वारा बनाए गए हैं, दोनों संविधान से अपने-अपने अधिकार प्राप्त करते हैं।
- उनके अनुसार, दोनों में से कोई अपने-अपने क्षेत्र में एक-दूसरे के अधीन नहीं है और एक का अधिकार दूसरे के साथ समन्वय करना है।
- औपनिवेशिक विरासत: 'केंद्र' शब्द औपनिवेशिक काल की याद दिलाता है क्योंकि नई दिल्ली स्थित सचिवालय में नौकरशाही 'केंद्रीय कानून', 'केंद्रीय विधायिका' आदि शब्द का उपयोग करने की आदी है। अत: बाकी सभी, जिनमें मीडिया भी शामिल हैं, ने इस शब्द का उपयोग करना शुरू कर दिया।
- संघवाद की भावना के विरुद्ध: भारत एक संघीय सरकार है। शासन करने की शक्ति पूरे देश के लिये दो तरह से विभाजित है। एक संघ की सरकार, जो सामान्य राष्ट्रीय हित के विषयों के लिये ज़िम्मेदार है, और दूसरी राज्यों की सरकार, जो राज्यों के विस्तृत एवं दिन-प्रतिदिन के क्रियाकलाप की देखरेख करते हैं।
- सुभाष कश्यप के अनुसार, 'केंद्र' या 'केंद्र सरकार' शब्द का उपयोग करने का मतलब होगा कि राज्य सरकारें इसके अधीन हैं।

निष्कर्ष

संविधान सभा के सदस्य संविधान में 'केंद्र' या 'केंद्र सरकार' शब्द का प्रयोग न करने के लिये बहुत सतर्क थे क्योंकि उनका उद्देश्य एक इकाई में शक्तियों के केंद्रीकरण की प्रवृत्ति को दूर रखना था। 'संघ सरकार' या 'भारत सरकार' का एक एकीकृत प्रभाव है। इससे यह संदेश जाता है कि यह सरकार सभी की है।

भूल जाने का अधिकार

हाल ही में दिल्ली उच्च न्यायालय ने 'भूलने के अधिकार (RTBF)' के प्रयोग की मांग करने वाले एक याचिकाकर्त्ता को राहत दी है। याचिकाकर्त्ता जो पहले एक नशीले पदार्थ के मामले में कारागार से बरी हो चुका था, ने उच्च न्यायालय के समक्ष ऑनलाइन प्लेटफॉर्म के माध्यम से अपने मुक्त होने के निर्णय को हटाने के लिये प्रार्थना की।

किसी व्यक्ति के निजता के अधिकार की रक्षा करने और उसे जनता के सूचना के अधिकार के साथ संतुलित करने तथा न्यायिक रिकॉर्ड में पारदर्शिता बनाए रखने के लिये उपरोक्त जानकारी को ऑनलाइन प्लेटफॉर्म से हटाने का अदालत का आदेश महत्त्वपूर्ण हो जाता है।

नोट :

भूल जाने का अधिकार

1. 'भूल जाने का अधिकार' इंटरनेट, सर्च , डेटाबेस, वेबसाइटों या किसी अन्य सार्वजनिक प्लेटफॉर्म से सार्वजनिक रूप से उपलब्ध व्यक्तिगत जानकारी को उस स्थिति में हटाने का अधिकार है जब यह व्यक्तिगत जानकारी आवश्यक या प्रासंगिक नहीं रह जाती है।
2. गूगल स्पेन मामले में यूरोपीय संघ के न्यायालय ("CJEU") के वर्ष 2014 के निर्णय के बाद RTBF का प्रचलन हुआ।
3. RTBF को सामान्य डेटा संरक्षण विनियमन (जीडीपीआर) के तहत यूरोपीय संघ में एक वैधानिक अधिकार के रूप में मान्यता दी गई है तथा यूनाइटेड किंगडम और यूरोप में कई अदालतों द्वारा इसे बरकरार रखा गया है।
4. भारत में ऐसा कोई कानून नहीं है जो विशेष रूप से भूल जाने के अधिकार का प्रावधान करता हो। हालाँकि पर्सनल डेटा प्रोटेक्शन बिल 2019 इस अधिकार को मान्यता देता है।

गूगल स्पेन केस

1. इस मामले में CJEU ने एक स्पेनिश नागरिक के पक्ष में फैसला सुनाया, जिसने गूगल से अपने बारे में समाचार पत्रों के लेखों के दो लिंक हटाने का अनुरोध किया था।
2. यह माना गया कि प्रोसेसिंग के उद्देश्यों के संबंध में अपर्याप्त, अप्रासंगिक या अत्यधिक पाई जाने वाली व्यक्तिगत जानकारी को मिटा दिया जाना चाहिये, भले ही इसे कानूनी रूप से प्रकाशित किया गया हो।

यूरोपीय न्यायालय (European Court)

- यूरोपियन कोर्ट ऑफ जस्टिस (European Court of Justice- ECJ) कानूनी मामलों के लिये वर्ष 1952 में स्थापित यूरोपीय संघ का सर्वोच्च न्यायालय है।
- यूरोपीय संघीय न्यायालय, कोर्ट ऑफ जस्टिस एंड जनरल कोर्ट (Court of Justice and General Court) का संयुक्त रूप है तथा इसका मुख्यालय लक्ज़मबर्ग में है।
- रोम संधि के अनुच्छेद 164 के अनुसार, यूरोपीय संघ के न्यायालय को वहाँ के कानून की व्याख्या करने और सभी सदस्य देशों की समान भागीदारी सुनिश्चित करने का काम सौंपा गया है।

भारत में RTBF और इसकी ज़रूरत

1. भारत में RTBF को भी विधायी मंज़ूरी प्राप्त नहीं है। हालाँकि पुट्टस्वामी निर्णय में सुप्रीम कोर्ट ने माना कि निजता का अधिकार एक मौलिक अधिकार है।
2. पुट्टस्वामी मामले में सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि "किसी व्यक्ति के अपने व्यक्तिगत डेटा पर नियंत्रण रखने और स्वयं के जीवन को नियंत्रित करने में सक्षम होने का अधिकार भी इंटरनेट पर अपने अस्तित्व को नियंत्रित करने के उसके अधिकार को शामिल करेगा"।
3. वर्तमान में कई उच्च न्यायालयों ने इस अधिकार पर अंतर्राष्ट्रीय न्याय प्रणाली को ध्यान में रखते हुए अपने निर्णयों में भूल जाने के अधिकार को स्पष्ट रूप से मान्यता दी है। उदाहरण के लिये:

1. कर्नाटक उच्च न्यायालय ने एक महिला के अधिकार को यह कहते हुए भुला दिया कि यह अधिकार पश्चिमी देशों की प्रवृत्ति के अनुरूप है। महिलाओं से जुड़े सामान्य और अति संवेदनशील मामले जो संबंधित व्यक्ति की शालीनता तथा प्रतिष्ठा को प्रभावित करते है, में भूल जाने के अधिकार का पालन किया जाना चाहिये।
2. इसी प्रकार एक अन्य मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय ने केंद्र और गूगल से पूछा था कि क्या निजता के अधिकार में इंटरनेट से अप्रासंगिक सूचनाओं को हटाने का अधिकार शामिल है ?
4. प्रौद्योगिकी के गहन एकीकरण और डेटा के डिजिटलीकरण के साथ एक साधारण गूगल सर्च से किसी व्यक्ति के बारे में ढेर सारी जानकारी मिल सकती है, जो संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत गारंटीकृत व्यक्ति की प्रतिष्ठा और गरिमा को ठेस पहुँचा सकती है।
5. ऐसे समय में जब न्यायपालिका अपनी महत्त्वाकांक्षी ई-न्यायालय परियोजना के तीसरे चरण में प्रवेश कर रही है, RTBF जैसे अधिकारों को न्यायिक डेटा भंडारण और प्रबंधन के लिये विकसित किसी भी तकनीकी समाधान में कोडित करना होगा।

नोट :

भूल जाने के अधिकार से जुड़ी चुनौतियाँ

1. कानूनी चुनौती: भूल जाने के अधिकार पर सार्वजनिक रिकॉर्ड से जुड़े मामलों के मध्य विरोध की स्थिति उत्पन्न हों सकती है।
    1. उदाहरण के लिये निर्णयों को हमेशा सार्वजनिक रिकॉर्ड के रूप में माना गया है और ये भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 74 के अनुसार सार्वजनिक दस्तावेज़ की परिभाषा के अंतर्गत आते हैं।
2. विधि सेंटर फॉर लीगल पॉलिसी की एक रिपोर्ट के अनुसार, RTBF को आधिकारिक सार्वजनिक रिकॉर्ड, विशेष रूप से न्यायिक रिकॉर्ड तक विस्तारित नहीं किया जा सकता है क्योंकि इससे लंबे समय में न्यायिक प्रणाली में जनता का विश्वास कमज़ोर होगा।
    2. सार्वजनिक डोमेन में सूचना टूथपेस्ट की तरह : जैसे एक बार टूथपेस्ट ट्यूब से बाहर हो जाता है तो उसे ट्यूब में वापस नहीं लाया जा सकता है, उसी तरह एक बार जानकारी सार्वजनिक डोमेन में उपलब्ध होने के बाद डिजिटल युग में इसके मिटने की संभावना अत्यंत काम हो जाती है।
3. व्यक्ति बनाम समाज: भूलने का अधिकार व्यक्तियों की निजता के अधिकार तथा समाज के सूचना के अधिकार और प्रेस की स्वतंत्रता के बीच एक दुविधा पैदा करता है।

आगे की राह

1. गोपनीयता को उचित प्रतिबंध बनाना: भूल जाने के अधिकार को लागू करने के लिये संविधान में एक बड़े संशोधन द्वारा अनुच्छेद 19 (2) के तहत गोपनीयता को उचित प्रतिबंध के आधार के रूप में जोड़ा जाना चाहिये।
2. गोपनीयता और सूचना संतुलन: इसके लिये एक फ्रेमवर्क के विकास की आवश्यकता है, जिसकी सहायता से कुछ मामलों में भूल जाने के अधिकार को प्रतिबंधित किया जा सकता है। उदाहरण के लिये :
    - अभिव्यक्ति और सूचना की स्वतंत्रता के अधिकार का प्रयोग करने में;
    - कानूनी दायित्वों के अनुपालन में;
    - सार्वजनिक हित या सार्वजनिक स्वास्थ्य में किये गए कार्य के प्रदर्शन में;
    - जनहित की प्राप्ति हेतु ;
    - वैज्ञानिक या ऐतिहासिक अनुसंधान उद्देश्य या सांख्यिकीय उद्देश्य;
    - कानूनी दावों की स्थापना, अभ्यास या बचाव।

निष्कर्ष

यह देखते हुए कि व्यक्तिगत डेटा संरक्षण विधेयक 2019 पहले ही संसद में पेश किया जा चुका है, भूलने के अधिकार पर व्यापक बहस की आवश्यकता है। ताकि भारतीय संविधान की स्वर्णिम त्रिमूर्ति (अनुच्छेद 14,19 और 21) का महत्त्वपूर्ण हिस्सा बनने वाले दो मौलिक अधिकारों के बीच संघर्ष को कम किया जा सके।

नोट :

आर्थिक घटनाक्रम

1991 के आर्थिक सुधार एवं 2021 का संकट

संदर्भ

तीस वर्ष पूर्व वर्ष 1991 में शुरू किये गए उदारीकरण की नीति का वर्ष 2021 में 30 साल पूरे हो गए। वर्ष 1991 के सुधार भारत के स्वतंत्रता के बाद के इतिहास में एक ऐतिहासिक क्षण था जिसने अर्थव्यवस्था की प्रकृति को मौलिक तरीकों से बदल दिया। भुगतान संतुलन की गंभीर समस्या ने वर्ष 1991 में आर्थिक संकट को जन्म दिया। इससे निपटने के लिये भारत के आर्थिक प्रतिष्ठान ने भारत की व्यापक आर्थिक बैलेंस शीट को सुधारने के लिये एवं विकास की गति को बढ़ाने के लिये एक बहुआयामी सुधार एजेंडा शुरू किया।

तीन दशक बाद कोविड-19 महामारी के कारण देश की अर्थव्यवस्था के सामने एक और बड़ी परीक्षा सामने खड़ी है। हालांकि दोनों संकट अपने आप में काफी भिन्न हैं, किंतु दोनों की गंभीरता तुलनीय हैं।

वर्ष 1991 के सुधारों का महत्त्व

1990 के बाद की भारत की आर्थिक रणनीति

- इसके तहत आर्थिक व्यवस्था पर हावी होने वाले एवं विकास की गति को बाधित करने वाले गैर-ज़रूरी नियंत्रणकारी और परमिट के विशाल तंत्र को समाप्त कर दिया।
- इसके तहत राज्य की भूमिका को आर्थिक लेन-देन के सूत्रधार के रूप में और वस्तुओं और सेवाओं के प्राथमिक प्रदाता के बजाय एक तटस्थ नियामक के रूप में परिभाषित किया।
- इसने आयात प्रतिस्थापन के बदले और वैश्विक व्यापार प्रणाली के साथ पूरी तरह से एकीकृत होने का नेतृत्व किया।

सुधारों का प्रभाव

- 21वीं सदी के पहले दशक तक भारत को सबसे तेज़ी से उभरते बाज़ारों में से एक के रूप में देखा जाने लगा।
- वर्ष 1991 के सुधारों ने भारतीय उद्यमियों की ऊर्जा को एक उपयुक्त मंच प्रदान किया।
- उपभोक्ताओं को विकल्प दिया और भारतीय अर्थव्यवस्था का चेहरा बदल दिया। पहली बार देश में गरीबी की दर में काफी कमी आई।

वर्ष 1991 के संकट की वर्ष 2021 से तुलना

उच्च राजकोषीय घाटा

- वर्ष 1991 संकट: वर्ष 1991 का संकट अधिक घरेलू मांग के कारण आयात में कमी और चालू खाता घाटे (CAD) के बढ़ने के कारण हुआ।
  - विश्वास की कमी के कारण धन का आउटफ्लो शुरू हो गया जिस कारण CAD के वित्तपोषण हेतु भंडार में तेज़ी से गिरावट हुई।
- 2021 संकट: महामारी से प्रेरित लॉकडाउन ने आर्थिक गतिविधियों को एक हद तक रोक दिया है। इसके परिणामस्वरूप उत्पादन में गिरावट आई है साथ ही, मांग में भी गिरावट आई है।
  - मांग में गिरावट का सामना करते हुए, राजकोषीय घाटे को बढ़ाना उचित है। सरकार ने पिछले साल राजकोषीय घाटे को बढ़ाकर 9.6% करने की अनुमति दी थी।

समष्टि आर्थिक स्थिति

- वर्ष 1991 का संकट: भारत को राजकीय कर्ज (Default on Sovereign Debt) में चूक से बचने के लिये टनों सोना गिरवी रखना पड़ा। तब भारत के पास महत्त्वपूर्ण आयातों का भुगतान करने के लिये विदेशी मुद्रा लगभग समाप्त हो गई थी।

नोट :

- वर्ष 2021 का संकट: वर्तमान मे अर्थव्यवस्था तीव्र गति से सिकुड़ रही है, केंद्र सरकार राज्यों के प्रति अपनी राजस्व प्रतिबद्धताओं में चूक कर रही है।
  - आज भारत में बेरोज़गारी बढ़ती जा रही है एवं नौकरियाँ दिन-ब-दिन खत्म हो रही है; दशकों से गरीबी की दर में गिरावट के बाद अब यह बढ़ती हुई नज़र आ रही है।

सुधारों की आलोचना

- वर्ष 1991 के सुधार: वर्ष 1991 के सुधार पैकेज को अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF) और विश्व बैंक द्वारा निर्धारित किये जाने के कारण भारी आलोचना का सामना करना पड़ा।
  - इसके अलावा, सुधार के रूप में कुछ कंपनियों को पूंजीपतियों को बेचने के कारण आलोचना की गई थी।
- 2021 सुधार: सुधारों के लिये ऐसा केंद्रीकृत दृष्टिकोण अब काम नहीं कर सकता है। इसे हाल ही में बनाए गए तीन कृषि कानूनों के प्रति उभरे विरोध में देखा जा सकता है।

आगे की राह

- सार्वजनिक व्यय को बनाए रखना: अल्पावधि में सार्वजनिक व्यय को बनाए रखना विकास को पुनर्जीवित करने की कुंजी है।
  - वर्तमान में टीकाकरण के लिये अधिक धन उपलब्ध कराने और मनरेगा की विस्तारित मांग को पूरा करने के लिये सार्वजनिक व्यय अत्यधिक वांछनीय है क्योंकि यह एक सुरक्षा तंत्र साबित हो रहा है।
  - साथ ही, अगले तीन वर्षों में घाटे को कम करने एवं राजस्व लक्ष्यों को और अधिक वास्तविक स्तर पर संशोधित करने के लिये एक विश्वसनीय रास्ता अपनाने की आवश्यकता है।
- पारस्परिक रूप से सहायक सुधार: वर्ष 1991 के सुधार सफल हुए क्योंकि वे पारस्परिक रूप से सहायक सुधारों के एक मुख्य समस्या के समाधान के आसपास केंद्रित थे।
  - अत: सुधारों की एक लंबी सूची के बदले प्राथमिकता सूची के आधार पर समस्याओं को एक अधिक केंद्रित रणनीतिक दृष्टिकोण से सुलझाने की आवश्यकता है।
  - इस संदर्भ में बिजली क्षेत्र, वित्तीय प्रणाली, शासन संरचना और यहाँ तक कि कृषि विपणन में सुधार की आवश्यकता है।
- निवेश के माहौल में सुधार: निवेश समग्र मांग और आर्थिक विकास का एक प्रमुख स्रोत है। निवेश के बेहतर विकल्प के सन्दर्भ में कुछ धारणाएँ प्रमुख हैं, जैसे:
  - नीतिगत ढाँचा नए निवेशों का समर्थन करने वाला होना चाहिये ताकि उद्यमियों को जोखिम लेने के लिये प्रोत्साहित किया जा सके।
  - शांतिपूर्ण वातावरण और सामाजिक एकता जैसे गैर-आर्थिक कारक भी प्रासंगिक हैं। अत: सरकार को इन सभी मोर्चों पर काम करना शुरू कर देना चाहिये।
- विनिवेश का मारुति मॉडल: सरकार को रणनीतिक भागीदारों के लिये बैंकों सहित प्रत्येक उपक्रम में अपना स्वामित्व कम कर 26% तक रखना चाहिये, जैसा कि सरकार ने वर्ष 1991 के सुधारों के बाद मारुति विनिवेश के तहत किया था।
- इस संदर्भ में अगले छह महीनों के भीतर एयर इंडिया, बीपीसीएल और कॉनकॉर जैसे सार्वजनिक उपक्रमों में सरकार विनिवेश कर सकती है। इस प्रतिबद्धता के साथ कि अगले पाँच वर्षों के लिये हर साल दो दर्जन सार्वजनिक उपक्रमों को 'मारुति मॉडल' में विभाजित किया जाएगा।
  - इससे सरकार को अरबों रुपये के निवेश योग्य अधिशेष पैदा करने में मदद मिलेगी।
- बहु-हितधारक दृष्टिकोण: वर्तमान सुधारों के लिये भी आम चर्चा और आम सहमति बनाने की आवश्यकता है। केंद्र सरकार को राज्य सरकारों के साथ मिलकर काम करने और सुधार के निर्णयों से प्रभावित विभिन्न हितधारकों से परामर्श करने की आवश्यकता है।

निष्कर्ष

वर्ष 1991 के सुधारों ने अर्थव्यवस्था को संकट से उबारने और फिर गति पकड़ने में मदद की। वर्तमान समय भी एक विश्वसनीय नए सुधार एजेंडे की रूपरेखा तैयार करने का समय है जो न केवल जीडीपी को महामारी के संकट के पूर्व-स्तर पर वापस लाएगा बल्कि, यह भी सुनिश्चित करेगा कि विकास दर महामारी की शुरुआत के समय की तुलना में अधिक हो।

नोट :

अवसंरचना निर्माण में विकास वित्तीय संस्थान की भूमिका

संदर्भ

विकास वित्तीय संस्थान (Development Financial Institutions-DFI) लंबी अवधि तक चलने वाले पूंजी-गहन निवेशों के लिये दीर्घकालिक एवं कम दरों पर ऋण प्रदान करते हैं, जैसे कि शहरी बुनियादी ढाँचा, खनन, भारी उद्योग तथा सिंचाई प्रणाली आदि।

- वे बुनियादी ढाँचे के लिये आवश्यक दीर्घकालिक वित्त को प्रसारित करने और उच्च आर्थिक विकास को गति देने के लिये महत्त्वपूर्ण मध्यवर्ती संस्थाओं के रूप में कार्य करते हैं।
- भारत में वर्ष 1991 के सुधारों के बाद प्रमुख DFI को वाणिज्यिक बैंकों में परिवर्तित कर दिया गया। हालाँकि इनके बाद देश में कुछ ही संस्थान थे जो औद्योगिक या बुनियादी ढाँचे के विकास में योगदान दे सकते थे।
- इसलिये बुनियादी ढाँचे की कमियों को दूर करने के लिये सरकार ने भारत में DFI को फिर से स्थापित करने का प्रस्ताव देकर एक सकारात्मक कदम उठाया है।

डीएफआई: पृष्ठभूमि और वर्तमान स्थिति

- विकास बैंक, वाणिज्यिक बैंकों से भिन्न होते हैं, जो एक परिपक्वता बेमेल (बैंक की तरलता और सॉल्वेंसी का एक संभावित कारण) से बचने के लिये लघु से मध्यम अवधि के लिये राशि जमा करते हैं तथा समान परिपक्वता के लिये ऋण देते हैं।
- भारत में, पहला DFI 1948 में औद्योगिक वित्त निगम (IFC) की स्थापना के साथ चालू हुआ था।
- भारत में औद्योगिक विकास बैंक (IDBI), भारतीय औद्योगिक ऋण और निवेश निगम (ICICI) और IFCI जैसी DFI ने अतीत में औद्योगिक विकास को उपलब्ध कराए गए सर्वोत्तम संसाधनों के साथ सहायता करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।
- हालाँकि वर्ष 1991 के सुधारों के बाद, भारतीय रिज़र्व बैंक (RBI) और सरकार से प्राप्त होने वाला रियायती धन बाद के वर्षों में उपलब्ध नहीं हुआ।
- नतीजतन, IDBI और ICICI को खुद को सार्वभौमिक (यूनिवर्सल) बैंकों में बदलना पड़ा।
- जब उपर्युक्त DFI निष्क्रिय हो गए, IDFC (1997), IIFCL (2006) और हाल ही में राष्ट्रीय निवेश और अवसंरचना कोष (NIIF) (2015) जैसे संस्थानों का एक नया समूह बुनियादी ढाँचे के वित्तपोषण पर ध्यान केंद्रित करने के लिये उभर कर आया।
- बजट 2021 में सरकार द्वारा प्रतिबद्ध 20000 करोड़ के प्रारंभिक पूंजी के आधार के साथ नया डीएफआई लगभग 7 गुना का लाभ उठाते हुए 1.4 ट्रिलियन तक उधार दे सकता है।

डीएफआई की आवश्यकता

- आधारभूत संरचना का निर्माण: अपर्याप्त और अक्षम बुनियादी ढाँचे की लागत उच्च होती है जो अर्थव्यवस्था की विकास क्षमता को प्रभावित करती है।
  - इसलिये डीएफआई की आवश्यकता है क्योंकि केंद्र सरकार ने महत्त्वाकांक्षी योजना राष्ट्रीय अवसंरचना पाइपलाइन के लिये लगभग 100 लाख करोड़ जुटाने की परिकल्पना की है।
- आधारभूत अवसंरचना के लिये वित्त की कमी: हालाँकि भारत में सरकारी प्रतिभूतियों और कॉरपोरेट बॉण्ड के रूप में एक दीर्घकालिक ऋण बाज़ार है, फिर भी यह खुदरा निवेशकों की पहुँच से बाहर है और आधारभूत अवसंरचना से जुड़े बड़े प्रोजेक्ट के वित्तपोषण की ज़रूरतों को पूरा करने में असमर्थ है।
- अंतर्राष्ट्रीय उदाहरण: दुनिया भर के देशों ने प्रमुख आधारभूत अवसंरचना और विनिर्माण परियोजनाओं के वित्तपोषण हेतु विकास बैंक स्थापित किये हैं।
  - उदाहरण के लिये, यूरोपियन इन्वेस्टमेंट बैंक (EIB) यूरोप के लिये DFI की तरह कार्य करता है।
- कोविड-19 महामारी से उत्पन्न आर्थिक संकट: कोविड-19 महामारी ने असमानता, गरीबी की खाई, बेरोज़गारी और अर्थव्यवस्था की धीमी गति जैसी समस्याओं को बढ़ा दिया है।

नोट :

- इस प्रकार डीएफआई के माध्यम से बुनियादी ढाँचे का निर्माण त्वरित आर्थिक सुधार में मदद कर सकता है।

आगे की राह:

- डीएफआई के लिये पूंजी जुटाना: लंबी अवधि के ऋण जारी करने के लिये DFI को समान रूप से वित्त के दीर्घकालिक स्रोतों की आवश्यकता होगी।
  - पूर्व में डीएफआई सस्ते सरकारी फंड्स पर अधिक निर्भर थे और आज के वाणिज्यिक बैंकों को लंबी अवधि की परियोजनाओं को निधि देने हेतु खुदरा जमा राशि पर निर्भरता के कारण परिसंपत्ति-देयता बेमेल की स्थिति का सामना करना पड़ा।
  - ऐसे में नए डीएफआई के लिये फंडिंग के विविध स्रोतों पर ध्यान केंद्रित करना सबसे बेहतर विकल्प हो सकता है।
  - वर्तमान में डीएफआई को पूंजीगत लाभ/कर-मुक्त बॉण्ड जारी कर, विदेशी ऋण और बहुपक्षीय एजेंसियों से प्राप्त ऋण आदि जैसे वैकल्पिक मार्गों द्वारा पर्याप्त रूप से पूंजीकृत किया जा सकता है।
- विशेषीकृत DFIs: 'सुपर मार्केट' ऋणदाता जो किसी भी परियोजना को निधि देने के लिये तैयार रहते हैं, की तुलना में विशिष्ट वर्टिकल पर ध्यान केंद्रित करने वाले विशेषीकृत परियोजना करदाता परियोजना मूल्यांकन कौशल के निर्माण और जोखिम प्रबंधन में बेहतर प्रदर्शन करते हैं।
  - अत: सरकार को NHB और नाबार्ड (NABARD) जैसे पुनर्वित्तीयन संस्थानों की सफलता पर आधारित कई विशेषीकृत डीएफआई की स्थापना पर विचार करना चाहिये।
- व्यापार सुगमता सुनिश्चित करना: इससे पहले कई महत्त्वाकांक्षी राजमार्ग और पाइपलाइन परियोजनाएँ लगातार स्थानीय विरोध, भूमि अधिग्रहण संकट, पूर्वव्यापी कर तथा खराब अनुबंध प्रवर्तन के कारण लंबे समय तक स्थगित रही हैं।
  - डीएफआई की सफलता इस तरह के मुद्दों के समाधान और ईज़ ऑफ डूइंग बिज़नेस के मार्ग में व्याप्त रुकावटों को दूर करने के प्रयासों पर निर्भर करेगी।
- खुदरा निवेशकों तक पहुँचना: सरकार को खुदरा निवेशकों तक पहुँचने के लिये संस्थान और नेटवर्क प्लेटफॉर्म स्थापित करने की जरूरत है और बॉण्ड/इंस्ट्रूमेंट्स के प्रयोग को प्रोत्साहित करना चाहिये ताकि वे उन उपकरणों में लंबी अवधि के निवेश के लिये आकर्षित हों।
- डीएफआई का प्रशासन: संस्थान का स्वामित्व और संगठन संरचना महत्त्वपूर्ण हैं। इसमें और अधिक स्पष्टता की आवश्यकता है क्योंकि इसका संस्था के कामकाज, प्रशासन और इसकी दीर्घकालिक स्थिरता पर असर पड़ेगा।
  - एक डीएफआई के लिये राजनीतिक हस्तक्षेप या ऋण धोखाधड़ी से मुक्त होना आवश्यक है, परंतु वित्तीय संस्थानों के बोर्ड पर निजी शेयरधारकों या पेशेवर प्रबंधकों का होना सुशासन सुनिश्चित करने के लिये पर्याप्त नहीं है।
  - इसे बाहरी नियंत्रण और संतुलन की एक मज़बूत प्रणाली (जैसे-RBI द्वारा पर्यवेक्षण तथा लेखा परीक्षकों एवं रेटिंग एजेंसियों द्वारा उचित निगरानी आदि) द्वारा समर्थन प्रदान करना होगा।
- डीएफआई की कार्यक्षमता: बाज़ार संचालित उधार पैकेज की पेशकश करके संस्थान के साथ काम करने के लिये बुनियादी ढांचे, नीतियों, वित्तपोषण और जोखिम प्रबंधन की अच्छी समझ वाले विशेषज्ञों को नियुक्त करना महत्त्वपूर्ण है।
- डीएफआई की आवधिक समीक्षा: यह सुनिश्चित करने के लिये आवधिक समीक्षा आवश्यक है कि अर्थव्यवस्था की बदलती प्राथमिकताओं को ध्यान में रखते हुए, अपनी भूमिका में परिणामी समायोजन करके डीएफआई प्रासंगिक बना रहे।

निष्कर्ष:

सतत् विकास के लिये अवसंरचना क्षेत्र में निवेश को बढ़ावा दिया जाना महत्त्वपूर्ण है, परंतु वर्तमान में ऋण बाज़ार में लंबे समय से व्याप्त समस्याओं को भी हल करने की आवश्यकता है जो लंबी अवधि के वित्तपोषण प्रवाह को बाधित करती हैं।

भारत जैसे विकासशील देश के लिये, यह वांछनीय है कि नया डीएफआई दीर्घकालिक विकास वित्तपोषण आवश्यकताओं को पूरा करने में सक्षम होने के लिये व्यवहार्य और टिकाऊ बना रहे।

नोट :

अंतर्राष्ट्रीय घटनाक्रम

वैश्विक न्यूनतम कर

संदर्भ

हाल ही में G7 की बैठक में सातों देशों के वित्त मंत्रियों ने कम से कम 15 प्रतिशत के वैश्विक न्यूनतम कर (GMT) एवं 100 सबसे बड़ी कंपनियों के अतिरिक्त लाभ को उन देशों के साथ साझा करने, जहाँ वे कार्य करते, के प्रति अपनी प्रतिबद्धता दिखाई है।

- आधार क्षरण एवं लाभ हस्तांतरण (Base Erosion and Profits Shifting - BEPS) की अवधारणा लागू होने के पश्चात् न्यूनतम वैश्विक कराधान में कर सुधारों की दिशा में एक और सकारात्मक कदम है।
- इसका उद्देश्य बड़ी कंपनियों को मूल रूप से शेल कंपनियों के माध्यम से अपने लाभ को कम-कर वाले देशों में स्थानांतरित करने से रोकना है। इसका एक और उद्देश्य मनी लॉन्ड्रिंग और आतंकवाद के वित्त पोषण को रोकना है।
- हालाँकि जीएमटी से जुड़े कई मुद्दे हैं, विशेषत: विकासशील दुनिया से संबंधित। अंतिम निष्कर्ष पर पहुँचने से पहले इन मुद्दों को हल किया जाना चाहिये।

टैक्स हेवन की अवधारणा को समझना

- परिभाषा: एक टैक्स हेवन देश आम तौर पर एक ऐसा देश है जहाँ राजनीतिक और आर्थिक रूप से स्थिर वातावरण में विदेशी व्यवसायों या संस्थाएँ पर बहुत कम या कोई कर देयता नहीं होती है।
- विशेषताएँ: टैक्स हेवन देशों की विशेषताओं में आम तौर पर न्यूनतम आय कर, सूचनाओं की न्यूनतम रिपोर्टिंग, पारदर्शिता में कमी, भौतिक रूप उपस्थित होने की बाध्यता का ना होना इत्यादि, शामिल है।
- मोडस ऑपरेंडी (कार्य करने का तरीका): आम तौर पर टैक्स हेवन को व्यक्तियों और व्यवसायों के लिये उनकी टैक्स नीतियों से लाभ उठाने के लिये उस देश में निवास या व्यावसायिक रूप से उपस्थित होने की आवश्यकता नहीं होती है।
  - व्यक्तियों और निगमों को कानून में कमियों, क्रेडिट या अन्य विशेष उपायों के माध्यम से विदेशों में आय पर लगाए गए कम करों या बिना करों से लाभ हो सकता है। आईएमएफ के एक शोध पत्र के अनुमान के अनुसार, वैश्विक कॉर्पोरेट निवेश का $12 ट्रिलियन कर से बचने के लिये सिर्फ 'Phantam' निवेश (ऐसी जगहों पर निवेश जिसके बारे में कोई विशेष जानकारी ना हो) था।
- लोकप्रिय टैक्स हेवन: कुछ सबसे लोकप्रिय टैक्स हेवन देशों की सूची में अंडोरा, बहामास, बरमूडा, ब्रिटिश वर्जिन आइलैंड्स, केमैन आइलैंड्स, चैनल आइलैंड्स, कुक आइलैंड्स, हांगकांग, मॉरीशस, लिचेंस्टीन, मोनाको, पनामा शामिल हैं। ब्रिटिश वर्जिन आइलैंड्स और केमैन आइलैंड्स।
- इंट्रानेशनल टैक्स हेवन: कुछ मामलों में यदि कुछ स्थानों पर विशेष कर कानून लागू होते हैं तो इंट्रानेशनल स्थानों को भी टैक्स हेवन के रूप में भी पहचाना जा सकता है ।
- नियामकीय निरीक्षण: दुनिया भर में विदेशी निवेश रिपोर्टिंग को बढ़ाने के लिये कुछ कार्यक्रम हैं। वित्तीय सूचनाओं का स्वचालित आदान-प्रदान इसका एक उदाहरण है, जिसकी देखरेख ओईसीडी करता है।
  - कर प्राप्तियों को अधिकतम करने के लिये कई विदेशी सरकारें विदेशी निवेश खातों के बारे में जानकारी जारी करने के लिये टैक्स हेवन देशों पर निरंतर दबाव बनाए रखती हैं।
  - हालाँकि मौद्रिक बोझ के कारण नियामकीय निरीक्षण किसी देश की सर्वोच्च राष्ट्रीय प्राथमिकता नहीं हो सकता है।

जीएमटी की कार्य पद्धति ?

- मूल संस्थाओं पर कर लगाना: इसके तहत 750 मिलियन यूरो से अधिक राजस्व वाली फर्मों को वास्तविक और प्रभावी कर दर के बीच अंतर पर कर लगाने का पहला अधिकार उस देश को है जहाँ ये कंपनियाँ मूल रूप से स्थित हैं।

नोट :

- मिरर नियम: यह नियम भारत जैसे स्रोत देशों को अधिक-कर क्षेत्राधिकार से कम-कर क्षेत्राधिकारों में सीमा पार भुगतान पर कर की उच्च दर लगाने का अधिकार देता है। यह कुछ नियमों एवं शर्तों के अधीन है। इसके लिये दूसरे पक्ष के देश (कम-कर क्षेत्राधिकार वाले देश) के साथ द्विपक्षीय संधि की आवश्यकता होगी।

GMT के साथ संबद्ध मुद्दे

- रेस टू बॉटम: न्यूनतम कर का अनिवार्य रूप से अर्थ यह होगा कि संधि दरों या स्थानीय कर प्रणालियों में मौजूद कर प्रोत्साहन भी अब उपलब्ध नहीं हो सकते हैं।
  - यह विकासशील और अविकसित देशों के लिये एक समस्या बनी हुई है, जहाँ कर प्रोत्साहन निवेश को आकर्षित करने का काम करते हैं।
  - भारत जैसे देश के लिये भी हाल ही में अंतरराष्ट्रीय वित्तीय सेवा केंद्र के माध्यम से विदेशी निवेशकों को लाने का प्रयास एक प्रोत्साहन है।
- एक्सक्लूसिविस्ट इन नेचर: जीएमटी का प्रस्ताव प्रकृति में एक्सक्लूसिविस्ट या विशिष्ट है क्योंकि दुनिया के लिये यह नियम चुनिंदा विकसित देशों द्वारा तय किये जाएँगे।
  - इसके अलावा, विकासशील देशों के लिये संप्रभुता के नज़रिए से करारोपण चिंता बनी हुई है।
- प्रतिकूल प्रभाव: यदि सभी राष्ट्र वैश्विक न्यूनतम कर प्रस्ताव से सहमत नहीं हैं, तो यह एक नई तरह की प्रतिस्पर्द्धा को जन्म दे सकता है - निगम या वाणिज्यिक संस्थाएँ अपनी मूल शाखा वहाँ स्थापित करेंगे जहाँ न्यूनतम कर नियम लागू ना हो। इसके परिणामस्वरूप नए टैक्स हेवन का निर्माण होगा।
- विकसित देशों की दोहरी प्रकृति: ब्रिटेन लंबे समय से बरमूडा, ब्रिटिश वर्जिन आइलैंड्स, केमैन आइलैंड्स और चैनल आइलैंड्स जैसे ब्रिटिश क्षेत्रों में टैक्स हैवन बनाने में लगा हुआ है।
  - इसके अलावा भारत सहित कुछ देशों ने अपने राजस्व के आधार पर डिजिटल बहुराष्ट्रीय कंपनियों पर कर लगाना शुरू कर दिया है। यह अमेरिकी प्रशासन था जिसने भारत और ऐसे अन्य देशों को जवाबी कार्रवाई की धमकी दी थी।
- विकासशील देशों की विकास में बाधा: 15% न्यूनतम कॉर्पोरेट टैक्स न केवल टैक्स हेवन बल्कि भारत सहित अन्य देशों को प्रभावित करेगा, जो विशिष्ट उद्देश्यों जैसे- निर्यात उद्योग, पिछड़े क्षेत्रों या विशेष आर्थिक क्षेत्रों में निवेश, हरित निवेश, आर एंड डी, त्वरित मूल्यह्रास के लिये टैक्स ब्रेक की पेशकश करते हैं।

निष्कर्ष

सबसे आसान एवं ईमानदार समाधान है कि टैक्स ब्रेक की परवाह किये बिना 15% के वैकल्पिक न्यूनतम कर का प्रावधान किया जाए। कोई भी देश जो विशेष प्रोत्साहनों के माध्यम से राजनीतिक या सामाजिक लक्ष्यों को प्राप्त करना चाहता है उसे बजटीय अनुदानों के माध्यम से ऐसा करना होगा, कर रियायतों के माध्यम से नहीं।

नोट :

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी

AI: वरदान या अभिशाप

संदर्भ

ऐतिहासिक रूप से वैश्विक महाशक्तियों के मध्य प्रौद्योगिकी प्रतियोगिता भू-राजनीति का एक मुख्य पहलू रही है। इस युग में इसे अमेरिका और चीन के बीच भू-राजनीतिक कूटनीति में प्रत्यक्षत: परिलक्षित किया जा सकता है। ऐसी ही एक तकनीकी प्रतियोगिता कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence-AI) के क्षेत्र में आसानी से देखी जा सकती है।

- कृत्रिम बुद्धिमत्ता वह प्रक्रिया है, जिसमें मशीनों को इंसानों की तरह सोचने के लिये प्रोग्राम किया जाता है। AI अपनी भूमिका एवं व्यापक उपयोगिता के कारण महत्त्वपूर्ण तकनीक के रूप में उभरा है।
- हालाँकि AI का उपयोग कई गलत उद्देश्यों के लिये भी किया जा सकता है, जैसे- गलत सूचना, आपराधिक गतिविधि, व्यक्तिगत गोपनीयता का अतिक्रमण या तकनीक प्रेरित बेरोज़गारी को बढ़ावा देना।
- चूँकि वैश्विक समुदाय AI के सकारात्मक पक्ष का लाभ उठाने का प्रयास कर रहा है, अत: उन्हें इससे जुड़ी चुनौतियों का सामना तथा AI के लिये मानव-केंद्रित दृष्टिकोण विकसित करना चाहिये।

AI के लाभ

- AI के कुछ प्राथमिक लाभ इस प्रकार हैं:
  - AI की सहायता से किसी कार्य को अपेक्षाकृत कम समय में किया जा सकता है। यह मल्टी-टास्किंग को सक्षम बनाता है और मौजूदा संसाधनों पर कार्यभार को कम करता है।
  - AI महत्त्वपूर्ण एवं जटिल कार्यों को बिना किसी विशेष लागत के पूरा करने में सक्षम बनाता है।
  - AI बिना किसी रुकावट या ब्रेक के 24X7 कार्य कर सकता है।
  - AI 'विशेष रूप से सक्षम व्यक्तियों' की क्षमताओं को बढ़ाता है।
  - बाज़ार के लिये AI विविध रूपों में उपयोगी है। इसे उद्योगों में प्रयुक्त किया जा सकता है।
  - AI कार्य की प्रक्रिया को तेज़ और स्मार्ट बनाकर निर्णय लेने की सुविधा प्रदान करता है।
- 360-डिग्री प्रभाव: इन लाभों के आधार पर AI का उपयोग कई सकारात्मक तरीकों से किया जा सकता है। जैसे- नवाचार को बढ़ावा देने, दक्षता बढ़ाने, विकास में सुधार करने और उत्पादों के उपभोक्ता के अनुभव को समृद्ध करने के लिये।
  - भारत के लिये AI तकनीक का प्रयोग निश्चित तौर पर समावेशी विकास से जुड़ा होगा, जिसका कई क्षेत्रों जैसे, कृषि, स्वास्थ्य और शिक्षा पर सकारात्मक प्रभाव पड़ने की संभावना है।
  - मशीन लर्निंग और बिग डेटा में हालिया सफलताओं से प्रेरित, AI उभरती प्रौद्योगिकियों पर अंतर्राष्ट्रीय सहयोग की संभावनाओं और चुनौतियों के लिये एक अच्छा प्लेटफॉर्म है।

राष्ट्रीय कृत्रिम बुद्धिमत्ता पोर्टल

- यह इलेक्ट्रॉनिक्स और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय (Ministry of Electronics and IT- MeitY), राष्ट्रीय ई-गवर्नेंस डिवीजन (National e-Governance Division- NeGD) और नैसकॉम (NASSCOM) की एक संयुक्त पहल है।
  - राष्ट्रीय ई-गवर्नेंस डिवीज़न: वर्ष 2009 में डिजिटल इंडिया कॉरपोरेशन (MeitY द्वारा स्थापित एक गैर-लाभकारी कंपनी) के तहत NeGD को एक स्वतंत्र व्यापार प्रभाग के रूप में स्थापित किया गया था।

नोट :

- NASSCOM एक गैर-लाभकारी औद्योगिक संघ है जो भारत में IT उद्योग के लिये सर्वोच्च निकाय है।

- यह भारत और उसके बाहर कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) से संबंधित समाचार, सीखने, लेख, घटनाओं और गतिविधियों आदि के लिये एक केंद्रीय हब (Hub) के रूप में कार्य करता है।

AI के साथ जुड़े मुद्दे

- पूर्वाग्रहों और असमानताओं को बढ़ावा देना: यह नहीं भूलना चाहिये कि AI प्रणाली मनुष्यों द्वारा बनाया गया है, जो पक्षपाती और निर्णयात्मक हो सकते हैं। इस प्रकार AI पूर्वाग्रहों और असमानताओं को बढ़ावा दे सकता है, यदि AI एल्गोरिदम का प्रारंभिक प्रशिक्षण पक्षपाती है।
  - उदाहरण के लिये AI का प्रयोग कर चेहरे की पहचान और निगरानी तकनीक को रंग या किसी विशिष्ट पहचान से जोड़ कर लोगों के साथ भेदभाव किया जा सकता है।
- गोपनीयता की समस्या: AI सिस्टम बड़ी मात्रा में डेटा का विश्लेषण करके सीखते हैं और अगली बार यदि उससे मिलता-जुलता डेटा सामने आए तो उन्हीं विश्लेषण के आधार पर निष्कर्ष देते हैं। साथ ही वे इंटरेक्शन डेटा और उपयोगकर्त्ता के प्रतिक्रियाओं के निरंतर मॉडलिंग के माध्यम से अनुकूलन करते रहते हैं।
  - इस प्रकार AI के बढ़ते उपयोग के साथ, किसी की गतिविधियों की निगरानी कर उसके डेटा तक अनधिकृत पहुँच से निजता का अधिकार खतरे में पड़ सकता है।
- गैर-अनुपातिक शक्ति और नियंत्रण: बाज़ार में कार्यरत बड़ी शक्तियाँ कृत्रिम बुद्धिमत्ता के दोनों स्तरों, वैज्ञानिक/इंजीनियरिंग तथा वाणिज्यिक और उत्पाद विकास, पर भारी निवेश कर रहे हैं।
  - किसी भी महत्त्वाकांक्षी प्रतियोगी की तुलना में इन बड़ी शक्तियों को कहीं अधिक लाभ होगा जो तकनीक प्रेरित एकाधिकार या अल्पाधिकार (Monopoly or Oligopoly) को बढ़ावा देगा।
- तकनीक प्रेरित बेरोज़गारी: AI कंपनियाँ ऐसी मशीनों का निर्माण कर रही हैं जो आमतौर पर कम आय वाले श्रमिकों द्वारा किये जाने वाले कार्यों को करती हैं।
  - उदाहरण के लिये कैशियर को बदलने के लिये सेल्फ सर्विस कियोस्क, फील्ड वर्कर्स को बदलने के लिये फ्रूट-पिकिंग रोबोट आदि।
  - इसके अलावा, वह दिन दूर नहीं जब AI द्वारा कई डेस्क जॉब, जैसे कि एकाउंटेंट, वित्तीय व्यापारी और प्रबंधक को भी समाप्त कर दिया जाएगा।

आगे की राह

- अंतर्राष्ट्रीय सहयोग: यह देखते हुए कि विभिन्न सरकारों ने हाल ही में AI से जुड़ी नीतियाँ बनाई हैं और कुछ देशों में अभी भी इससे जुड़ी नीतियाँ तैयार हो ही रही हैं, बहुपक्षीय स्तर पर मानकों की स्थापना में अंतर्राष्ट्रीय सहयोग अभी भी बेहद ज़रूरी है।
- लचीली आपूर्ति श्रृंखला का निर्माण: प्रतिभा से परे, अतिरिक्त चुनौतियाँ जैसे, आवश्यक बुनियादी ढाँचा हासिल करना, लचीली आपूर्ति श्रृंखला सुनिश्चित करने, अंतर्राष्ट्रीय मानक, शासन, आवश्यक भौतिक बुनियादी ढाँचे के विकास के लिये आवश्यक महत्त्वपूर्ण खनिजों और अन्य कच्चे माल को सुनिश्चित करने पर ध्यान देने की आवश्यकता है।
- प्रौद्योगिकी का सही दिशा में उपयोग: AI प्रौद्योगिकी तकनीकी क्रांति के विकास के लिये बहुत बड़ा अवसर है, लेकिन यह सुनिश्चित करना होगा कि प्रौद्योगिकी का सही दिशा में उपयोग किया जाएगा।
  - इस संबंध में, दुनिया के विभिन्न हिस्सों में पहले से ही कुछ कदम उठाए जा रहे हैं, जैसे कि व्याख्या करने योग्य AI (Explainable AI-XAI) और यूरोपीय संघ का सामान्य डेटा संरक्षण विनियमन (General Data Protection Regulation-GDPR)।

निष्कर्ष

निकट भविष्य में लिये जाने वाले महत्त्वपूर्ण निर्णय 'AI पर अंतर्राष्ट्रीय सहयोग' की दिशा में परिवर्तनकारी प्रभाव डाल सकते हैं, जिससे चौथी औद्योगिक क्रांति के रूप में वर्णित की जाने वाली घटना को निर्णायक आकार मिल सकता है।

नोट :

भूगोल एवं आपदा प्रबंधन

विद्युत क्षेत्र में सुधार

संदर्भ

पिछले साल कोविड -19 महामारी के दौरान भारत सरकार ने आत्मनिर्भर भारत योजना के तहत बिजली क्षेत्र के लिये एक राहत पैकेज की घोषणा की थी। इस राहत पैकेज की घोषणा, डिस्कॉम की अक्षमता के कारण बिजली क्षेत्र से जुड़ी पूरी श्रृंखला पर पड़ने वाले नकारात्मक प्रभाव से बचाने के लिये, की गई थी।

- यह पहली बार नहीं है जब केंद्र सरकार ने डिस्कॉम की सहायता करने और बिजली के वितरण से जुड़ी समस्याओं से निपटने के लिये कदम बढ़ाया है (इससे पूर्व में UDAY/उदय योजना)। हालाँकि बार-बार हस्तक्षेप के बाद भी अंतिम परिणाम यह है कि डिस्कॉम वित्त की कमी से जुझ रही है और पुन: राहत पैकेज की ज़रूरत है।
- इससे बिजली क्षेत्र से जुड़ी प्रमुख संरचनात्मक समस्याएँ उजागर होती हैं, भारत में एक स्थायी बिजली क्षेत्र के लिये जिनका समाधान किया जाना चाहिये।

विद्युत क्षेत्र से संबद्ध चुनौतियाँ

- AT&C से होने वाली हानि: सकल तकनीकी और वाणिज्यिक (Aggregate technical and commercial-AT&C) हानियाँ खराब या अपर्याप्त बुनियादी ढाँचे से या बिजली की चोरी या बिलों के भुगतान नहीं होने के कारण होती हैं। उदय योजना (UDAY) के तहत वर्ष 2019 तक इन नुकसानों को कम कर 15 प्रतिशत तक लाने की परिकल्पना की थी। हालाँकि उदय डैशबोर्ड के आँकड़ों के अनुसार, वर्तमान में अखिल भारतीय स्तर पर AT&C से नुकसान 21.7 प्रतिशत है।
- लागत-राजस्व अंतर: डिस्कॉम की लागत (आपूर्ति की औसत लागत) और राजस्व (प्राप्त औसत राजस्व) के मध्य अंतर अभी भी अधिक है। यह बिजली दरों में नियमित संशोधन के अभाव के कारण है।
- सार्वभौमिक विद्युतीकरण का प्रभाव: विडंबना यह है कि सार्वभौमिक विद्युतीकरण सुनिश्चित करने के लिये सरकार के दवाब ने अक्षमता को बढावा देने में योगदान दिया है। विद्युतीकरण के लक्ष्य को पूरा करने के लिये जैसे-जैसे घरेलू कनेक्शन बढ़ाए जाते हैं, लागत संरचनाओं में बदलाव होता है, और वितरण नेटवर्क (ट्रांसफॉर्मर, तार, आदि) को बढ़ाने की भी आवश्यकता होती है। इसके साथ ही घाटा बढ़ना तय है।
- महामारी का आर्थिक नतीजा: महामारी के कारण औद्योगिक और वाणिज्यिक उपयोगकर्त्ताओं की मांग में गिरावट के साथ (जिसका उपयोग अन्य उपभोक्ताओं को क्रॉस-सब्सिडी के लिये किया जाता है) राजस्व में गिरावट आई है, जिससे डिस्कॉम का वित्तीय तनाव बढ़ गया है।
- निवेश में गिरावट: डिकॉम की खराब वित्तीय स्थिति के कारण, बिजली क्षेत्र (विशेषकर निजी क्षेत्र द्वारा) में नए निवेश कम हो रहे हैं।
- ऊर्जा का प्रधान स्रोत जीवाश्म ईंधन: देश के उत्पादन का 80% हिस्सा कोयला, प्राकृतिक गैस और डीजल जैसे जीवाश्म ईंधन पर आधारित तापीय बिजली है। इसके अलावा, भारत में अधिकांश संयंत्र (Plant) पुराने और अक्षम हैं।

सौभाग्य योजना:

- सौभाग्य योजना का शुभारंभ ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में सार्वभौमिक घरेलू विद्युतीकरण सुनिश्चित करने के लिये किया गया था।
- इस योजना के तहत केंद्र सरकार से 60% अनुदान राज्यों को दिया गया, जबकि राज्यों ने अपने कोष से 10% धन खर्च किया और शेष 30% राशि बैंकों ने बतौर ऋण के रूप में प्रदान की।
- विशेष राज्यों के लिये केंद्र सरकार द्वारा योजना का 85% अनुदान दिया गया, जबकि राज्यों को अपने पास से केवल 5% धन ही लगाना था और शेष 10% राशि बैंकों ने बतौर ऋण के रूप में प्रदान की।
- ऐसे सभी चार करोड़ निर्धन परिवारों को बिजली कनेक्शन प्रदान किया गया जिनके पास उस वक्त कनेक्शन नहीं था।

नोट :

- इस योजना का लाभ गाँव के साथ-साथ शहर के लोगों को भी प्रदान किया गया।
- केंद्र सरकार द्वारा बैटरी सहित 200 से 300 वाट क्षमता का सोलर पावर पैक दिया गया, जिसमें हर घर के लिये 5 LED बल्ब, एक पंखा भी शामिल था।
- बिजली के इन उपकरणों की देख-रेख 5 सालों तक सरकार अपने खर्च पर करेगी।
- बिजली कनेक्शन के लिये 2011 की सामाजिक, आर्थिक और जातीय जनगणना को आधार माना गया था। जो लोग इस जनगणना में शामिल नहीं थे, उन्हें 500 रुपए में कनेक्शन दिया गया और इसे 10 किश्तों में वसूला जाएगा।
- सभी घरों को बिजली पहुँचाने के लिये प्री-पेड मॉडल अपनाया गया था।

आगे की राह

- सब्सिडी को युक्तिसंगत बनाना: उच्च औद्योगिक/वाणिज्यिक टैरिफ और क्रॉस-सब्सिडी के कार्यान्वयन ने औद्योगिक और वाणिज्यिक क्षेत्रों की प्रतिस्पर्द्धा की क्षमता को प्रभावित किया है। इस प्रकार क्रॉस-सब्सिडी को युक्तिसंगत बनाने एवं इसके प्रभावी प्रवर्तन को सुनिश्चित करने की आवश्यकता है।
- AT&C से होने वाली हानि को कवर करना: बिजली की मांग के प्रबंधन के लिये, कृषि को आपूर्ति की जाने वाली बिजली की 100% मीटरिंग-नेट मीटरिंग, स्मार्ट मीटर एवं मीटरिंग शुरू करना आवश्यक है। प्रशुल्क संरचना में निष्पादन आधारित प्रोत्साहनों (Performance Based Incentives) को शामिल करने की भी आवश्यकता है।
- हरित ग्रिड: कुसुम योजना कृषि में बिजली सब्सिडी मॉडल के लिये एक उपयुक्त विकल्प प्रदान करती है। इस योजना का उद्देश्य कृषि के लिये सौर पंपों के उपयोग को बढ़ावा देना और यह प्रावधान करता है कि स्थानीय डिस्कॉम को किसान से अधिशेष बिजली खरीदनी चाहिये।
- सीमा पार व्यापार: सरकार को मौजूदा/आगामी पीढ़ी की परिसंपत्तियों का उपयोग करने के लिये सीमा पार बिजली व्यापार को सक्रिय रूप से बढ़ावा देने की जरूरत है। सार्क विद्युत ग्रिड सही दिशा में एक कदम है।

निष्कर्ष

डिस्कॉम की अक्षमता से निपटने के लिये राष्ट्रीय बिजली वितरण कंपनी की अवधारणा को आगे बढ़ाया जा रहा है। हालाँकि प्रणालीगत एवं आधारभूत ढाँचे की चुनौतियों को संबोधित किये बिना, डिस्कॉम की वित्तीय और परिचालन स्थिति में एक स्थायी बदलाव मुश्किल है।

नोट :

सामाजिक न्याय

पितृसत्ता की भूमिका और धर्म

वर्ष 2006 में दुर्गा मंदिर मदुरै में एक महिला ने वहाँ की पूर्णकालिक पुजारी (उस मंदिर में पुजारी एक वंशानुगत पद) होने का दावा किया। उसके दावे से सहमत मद्रास उच्च न्यायालय ने हाल ही में निर्णय सुनाया है कि "भगवान की वेदियों (टेबल जिस पर भगवान पर चढ़ाने वाली सामग्रियाँ रखी जाती हैं) को अवश्य ही लैंगिक पूर्वाग्रह से मुक्त रहना चाहिये।"

सबरीमाला निर्णय के बाद आए इस निर्णय को लैंगिक समानता को आगे बढ़ाने की दिशा में एक सकारात्मक कदम के तौर पर देखा जा सकता है।

दुनिया भर के कई धर्मों में पितृसत्तात्मक धारणाएँ प्रवेश कर गई हैं जो महिलाओं को कुछ धार्मिक गतिविधियों में भाग लेने से प्रतिबंधित करती हैं। उदाहरण के लिये महिलाओं पर प्रतिबंध उनके मासिक धर्म के आधार पर भी लगाए जाते हैं।

इसलिये महिलाओं को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र, चाहे वह आध्यात्मिक हो या भौतिक, में भाग लेने के अवसर सुनिश्चित करने के लिये धर्म और पितृसत्ता के बीच की कड़ी पर पूरी तरह से चर्चा करने की आवश्यकता है।

वर्ष 2018 में सर्वोच्च न्यायालय का फैसला

- सर्वोच्च न्यायालय ने केरल के सबरीमाला मंदिर में महिलाओं के प्रवेश के मुद्दे पर ऐतिहासिक फैसला सुनाते हुए हर उम्र की महिला को मंदिर में प्रवेश करने की अनुमति दे दी थी।
- 4:1 के बहुमत से हुए फैसले में पाँच जजों की संविधान पीठ ने स्पष्ट किया था कि हर उम्र की महिलाएँ सबरीमाला मंदिर में प्रवेश कर सकेंगी।
- इसके साथ ही सर्वोच्च न्यायालय ने केरल उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ द्वारा वर्ष 1991 में दिये गए उस फैसले को भी निरस्त कर दिया था जिसमें कहा गया था कि सबरीमाला मंदिर में महिलाओं को प्रवेश करने से रोकना असंवैधानिक नहीं है।
  - सर्वोच्च न्यायालय ने 'केरल हिंदू प्लेस ऑफ पब्लिक वर्शिप रूल', 1965 (Kerala Hindu Places of Public Worship Rules, 1965) के नियम संख्या 3 (b) जो मंदिर में महिलाओं के प्रवेश पर प्रतिबंध लगाता है को संविधान की कानूनी शक्ति से परे घोषित कर दिया था।

धर्म और पितृसत्ता के बीच संबंध

ऐसे कई तरीके हैं जिनसे धर्म पितृसत्ता को बढ़ावा दे सकता है:

- धार्मिक शास्त्र/शिक्षाओं के माध्यम से: धर्मों की एक विस्तृत श्रृंखला में कई धार्मिक शिक्षाओं में महिलाओं को केवल पालन-पोषण, देखभाल और जन्म देने की भूमिका के रूप में देखा जाता है।
  - जबकि इन भूमिकाओं को सकारात्मक और आवश्यक रूप में प्रस्तुत किया जाता है किंतु फिर भी वे समाज में लिंग मानदंडों और पितृसत्तात्मक शक्ति संरचनाओं को सुदृढ़ करते हैं।
  - यदि महिलाएँ लैंगिक रूढ़ियों के अनुरूप नहीं होने का विकल्प चुनती हैं तो यह माना जाता है कि वे न केवल लैंगिक मानदंडों और पारिवारिक अपेक्षाओं से बल्कि ईश्वर की इच्छा से भी भटक रही हैं।
  - पुरुष दैवीय संदेशों के प्राप्तकर्ता, व्याख्याता और प्रेषक के रूप में प्रमुख रहे हैं, जबकि महिलाएँ बड़े पैमाने पर शिक्षाओं की निष्क्रिय प्राप्तकर्त्ता और धार्मिक कर्मकांडों की भागी रही हैं।
- धार्मिक प्रथाओं के माध्यम से: कई धर्मों में मासिक धर्म और गर्भावस्था दोनों को अशुद्ध या अधर्मी माना जाता है।
  - उदाहरण के लिये इस्लाम में मासिक धर्म के दौरान महिलाओं को कुरान को छूने की अनुमति नहीं है। इसी तरह हिंदू धर्म में मासिक धर्म के दौरान महिलाओं को मंदिरों में प्रवेश करने की अनुमति नहीं है।

नोट :

- सती प्रथा या विधवाओं द्वारा अपने पति की चिता पर आत्मदाह करने की प्रथा सदियों तक फलती-फूलती रही क्योंकि इसकी जड़ें पति के बिना एक महिला के अस्तित्व की निरर्थकता के विश्वास में निहित थीं।

- धार्मिक संगठनों की संरचना के माध्यम से: हालाँकि कुछ धार्मिक संगठनों में महिलाओं को वरिष्ठ पदों पर रखा जाता है किंतु वे प्राय: निश्चित रूप से नियम के बजाय अपवाद प्रतीत होते हैं।
  - पुरोहिती या धार्मिक समूह के नेतृत्त्व से महिलाओं के इस बहिष्कार ने उन्हें धार्मिक और सामाजिक जीवन में हाशिये पर धकेल दिया।
- एकेश्वरवादी धर्मों के माध्यम से: एकेश्वरवादी धर्मों का विकास उनके सभी शक्तिशाली पुरुष देवताओं (जैसे यहूदी धर्म, ईसाई धर्म, इस्लाम और सिख धर्म) के माध्यम से हुआ है जिसने धर्म को पितृसत्तात्मक और लैंगिकवादी बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की।
- पितृसत्ता और धर्म तथा महिलाओं पर इसका प्रभाव
  - कारण और प्रभाव के रूप में कार्य करना: यदि पितृसत्ता समाज में सामान्य रूप से स्वीकार्य है तो इसका मुख्य कारण यह है कि यह धर्म से अपनी वैधता प्राप्त करती है, जो किसी भी समुदाय में सामाजिक रूप क्या सही और क्या गलत है, से संबंधित सबसे महत्त्वपूर्ण नियम पुस्तिका है।
  - माहिलाओं की हीन स्थिति : धर्म में पितृसत्तात्मक धारणाओं के कारण महिलाओं को पुरुषों की तुलना में शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक और लैंगिक रूप से कमज़ोर माना जाता है।
  - पुरुषों को प्रभावित करना क्योंकि यह महिलाओं को चोट पहुँचाता है: पितृसत्ता व्यक्ति के जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रवेश करती है और यह पुरुषों को उतना ही नुकसान पहुँचाती है जितना कि यह महिलाओं को प्रभावित करती है।
  - राजनीति और धर्म: राजनीति में धर्म का उपयोग जनता को अपने पक्ष में करने के लिये एक उपकरण के रूप में किया जाता है किंतु इन सबका खामियाजा महिलाओं को सांस्कृतिक दृष्टिकोण के परिणामों के रूप में भुगतना पड़ता है।

आगे की राह

- धर्म के सच्चे सार का रहस्योद्घाटन: विश्व के कई धर्मों में महिलाओं की भूमिका को स्पष्ट रूप से दबाया नहीं गया है। इस प्रकार धर्म के वास्तविक सार को उजागर करने की आवश्यकता है।
  - उदाहरण के लिये ऋग्वेद ने ब्रह्मांड के निर्माण के पीछे स्त्री ऊर्जा के विचार की व्याख्या की। इसके अतिरिक्त वैदिक काल में माहिलाओं की सभी क्षेत्रों में भूमिका देखने को मिलती है।
- समान नागरिक संहिता को लागू करना: संविधान के अनुच्छेद 44 में कहा गया है कि राज्य, संपूर्ण भारत में नागरिकों के लिये एक समान नागरिक संहिता (यूसीसी) को सुरक्षित करने का प्रयास करेगा।
  - लैंगिक समानता के आख्यान का विस्तार करने की दिशा में समान नागरिक संहिता को लागू करना सही दिशा में उठाया गया कदम होगा।
  - व्यक्तिगत कानूनों का संहिताकरण समय की मांग है। सभी व्यक्तिगत कानूनों का संहिताकरण किया जाए ताकि उनमें से प्रत्येक कानून में व्याप्त पूर्वाग्रह और रूढ़िवादिता को प्रकाश में लाया जा सके तथा संविधान के मौलिक अधिकारों के अनुरूप इन्हे समेकित किया जा सके।

निष्कर्ष

- दुर्गा मंदिर का उदाहरण केवल एक सोशल इंजीनियरिंग प्रयोग नहीं है बल्कि यह महिलाओं के लिये सभी अनुष्ठानों को खोलने हेतु अच्छा धार्मिक आधार भी है।

लैंगिक अल्पसंख्यकों का हाशियाकरण

वर्ष 1970 के दशक के दौरान समलैंगिकता को एक मानसिक विकार के रूप में माना जाता था लेकिन 1970 के दशक के बाद डॉ. फ्रैंक कामेनी जैसे कई सामाजिक कार्यकर्त्ताओं के प्रयासों से वैश्विक LGBTQ+ समुदाय अपने अधिकारों और समान स्थिति के लिये आगे बढ़ा।

हालाँकि भारत में समलैंगिक समुदाय अभी भी एक कलंकित और अदृश्य अल्पसंख्यक है। इसके अलावा जो कुछ भी लाभ समलैंगिक समुदाय को प्राप्त हुआ है वह न्यायपालिका द्वारा प्रदान किया गया है; विधायिकाओं द्वारा नहीं।

नोट :

अभी तक हुए न्यायिक निर्णयों के बावजूद भारत के लैंगिक अल्पसंख्यकों को रोज़गार, स्वास्थ्य के मुद्दों और व्यक्तिगत अधिकारों के संबंध में भेदभाव का सामना करना पड़ता है। यह इसे देश के उदार और समावेशी संविधान के साथ असंगत बनाता है।

LGBTQ+ के कल्याण में न्यायपालिका की भूमिका

- समाज की पारंपरिक अवधारणा की मांग और व्यक्तियों के अधिकारों तथा उनकी पहचान एवं सम्मान के बीच रस्साकशी के बीच उच्च न्यायपालिका ने नागरिक कल्याण को महत्त्व प्रदान किया है। इसे निम्नलिखित उदाहरणों में दर्शाया जा सकता है:
  - नाज़ फाउंडेशन बनाम एनसीटी ऑफ दिल्ली केस 2009: दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्णय में कहा गया है कि भारतीय दंड संहिता (आईपीसी) की धारा 377 संविधान के अनुच्छेद 14 में निहित समानता के अधिकार को ठेस पहुँचाती है क्योंकि यह एक अनुचित वर्गीकरण करता है और एक वर्ग के रूप में समलैंगिकों को लक्षित करता है।
  - राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण बनाम भारत संघ केस 2014: इस मामले में भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने ट्रांसजेंडर व्यक्तियों को 'थर्ड जेंडर' घोषित किया।
  - नवतेज सिंह जौहर व अन्य बनाम यूनियन ऑफ इंडिया केस 2018: इस मामले में भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने अपने निर्णय में माना कि वयस्कों के बीच सहमति से समलैंगिक व्यवहार को अपराध मानना (आईपीसी की धारा 377 के तहत), "असंवैधानिक, तर्कहीन, अनिश्चित और स्पष्ट रूप से मनमाना" था।
  - इस निर्णय ने भारत में LGBTQ+ समुदाय को न्याय प्राप्त करने और समलैंगिक मुक्ति आंदोलन के लिये एक आधार प्रदान किया है।

LGBTQ+ के खिलाफ भेदभाव

- पूर्ण समानता अभी भी दूर है: उच्च न्यायपालिका के विभिन्न निर्णयों के बावजूद भारत में समलैंगिक समुदाय अभी भी रोज़गार, स्वास्थ्य और व्यक्तिगत संबंधों के मामलों में भेदभाव का सामना करता है।
- कानूनी मंज़ूरी का विरोध: भारत संघ द्वारा हाल ही में भारत में समलैंगिक विवाहों को कानूनी मंज़ूरी देने के कदम का विरोध किया गया है।
  - सरकार ने कहा कि भारतीय दंड संहिता की धारा 377 को असंवैधानिक घोषित करना स्वत: ही समलैंगिक जोड़ों के विवाह को मौलिक अधिकार नहीं बनाता है।
- विषम लैंगिकता: विषम लैंगिकता हेटेरोसेक्सिस्म (hetero-sexism) और होमोफोबिया (homophobia) का मूल कारण है।
  - विषम लैंगिकता को लेकर यह विश्वास जताया जाता है कि यह यौन अभिविन्यास का दोषपूर्ण, पसंदीदा या सामान्य तरीका है।
  - यह लिंग बाइनरी को मानता है (यानी केवल दो अलग विपरीत लिंग हैं) और विपरीत लिंग के लोगों के बीच यौन एवं वैवाहिक संबंध ही सबसे उपयुक्त है।
- ट्रांसजेंडर अधिनियम के मुद्दे: संसद ने ट्रांसजेंडर व्यक्ति (अधिकारों का संरक्षण) विधेयक, 2019 पारित किया है, जिसे ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के कल्याण के लिये तैयार किया गया था।
  - हालाँकि LGBTQ+ समुदाय ने इस अधिनियम का विरोध किया, जिसमें सभी के लिये एक समान दृष्टिकोण, आरक्षण की अनुपस्थिति आदि मुद्दे शामिल हैं।

ट्रांसजेंडर व्यक्ति (अधिकारों का संरक्षण) विधेयक, 2019
Transgender Persons (Protection of Rights) Bill 2019

- ट्रांसजेंडर व्यक्ति को परिभाषित करना।
- ट्रांसजेंडर व्यक्ति के विरुद्ध विभेद का प्रतिषेध करना।
- ऐसे व्यक्ति को उस रूप में मान्यता देने के लिये अधिकार प्रदत्त करने और स्वत: अनुभव की जाने वाली लिंग पहचान का अधिकार प्रदत्त करना।
- पहचान-पत्र जारी करना।
- यह उपबंध करना कि ट्रांसजेंडर व्यक्ति को किसी भी स्थापन में नियोजन, भर्ती, प्रोन्नति और अन्य संबंधित मुद्दों के विषय में विभेद का सामना न करना पड़े।

नोट :

- प्रत्येक स्थापन में शिकायत निवारण तंत्र स्थापित करना।
- विधेयक के उपबंधों का उल्लंघन करने के संबंध में दंड का प्रावधान सुनिश्चित करना।

आगे की राह

- मैरिज ए ह्यूमन राइट: अमेरिकी सुप्रीम कोर्ट के जस्टिस एंथनी कैनेडी ने ओबर्गफेल बनाम होजेस मामले (2015) में विवाह संस्था के भावनात्मक और सामाजिक मूल्य को रेखांकित किया।
  - उन्होंने ज़ोर देकर कहा कि समान लिंग वाले जोड़े को विवाह के सार्वभौमिक मानव अधिकार से वंचित नहीं किया जाना चाहिये।
  - वर्ष 2021 तक 29 देशों में समलैंगिक विवाह को कानूनी रूप से स्वीकार किया गया और मान्यता दी गई है।
  - इस प्रकार भारतीय समाज और राज्य को बदलती प्रवृत्तियों के साथ तालमेल बिठाना चाहिये।
- अनुच्छेद 15 में संशोधन: अनुच्छेद 15 इस अवधारणा की आधारशिला है कि समानता भेदभाव का विरोध करती है।
  - यह नागरिकों को धर्म, नस्ल, जाति, लिंग या जन्म स्थान या इनमें से किसी के आधार पर राज्य द्वारा हर तरह के भेदभाव से बचाता है।
  - यौन अल्पसंख्यकों के विरुद्ध भेदभाव को रोकने के लिये गैर-भेदभाव के आधार को लिंग और यौन अभिविन्यास तक विस्तारित किया जाना चाहिये।
- व्यवहार परिवर्तन को प्रेरित करना: न्यायमूर्ति रोहिंटन एफ. नरीमन ने नवतेज सिंह जौहर मामले में सरकार को निर्देश दिया था कि वह जनसंचार माध्यमों और आधिकारिक चैनल के माध्यम से LGBTQ+ समुदाय से जुड़े कलंक को समाप्त करने के लिये पुलिस अधिकारियों सहित आम जनता तथा अधिकारियों को संवेदनशील बनाए।
  - स्कूल और विश्वविद्यालय के छात्रों को भी विषम लैंगिकता के मिथक को तोड़ने के लिये लैंगिकता की विविधता के बारे में जागरूक किया जाना चाहिये।

निष्कर्ष

- भारत के संस्थापकों ने संविधान की कल्पना मौलिक अधिकारों के एक प्रकाशस्तंभ के रूप में की थी। हालाँकि LGBTQ+ अभी भी नागरिकों के सबसे हाशिये पर खड़े वर्गों में से एक है।
- इसलिये यह बदलाव का समय है लेकिन इस बदलाव का बोझ केवल हाशिये पर स्थित लोगों के ऊपर नहीं डाला जाना चाहिये। इस दायित्व का निर्वहन नागरिक समाज, संबंधित नागरिकों और स्वयं LGBTQ+ समुदाय को मिलकर करना चाहिये।

जनसंख्या नियंत्रण : एक दोधारी तलवार

हाल ही में दो भारतीय राज्य सरकारों - उत्तर प्रदेश और असम ने जनसंख्या नियंत्रण के लिये कुछ आक्रामक उपायों की वकालत की है। यह प्रस्ताव राज्य सरकार द्वारा उपलब्ध कराई गई सेवाओं के लाभार्थी बनने के लिये दो बच्चों की नीति को आगे बढ़ाने से संबंधित है।

वर्तमान में चल रहे रुझानों को देखते हुए यह अंदाजा लगाया जा सकता है कि भारत वर्ष 2025 तक या शायद इससे पहले सबसे अधिक आबादी वाले देश चीन को पछाड़कर प्रथम स्थान पर आ जाएगा। अत्यधिक जनसंख्या का बोझ अस्पतालों, खाद्यान्नों, घरों या रोज़गार जैसे संसाधनों की कमी पैदा कर रहा है।

हालाँकि शास्त्रीय आर्थिक सिद्धांत पर आधारित जनसंख्या नियंत्रण दोधारी तलवार के समान रहा है। इसके लाभ और लागत दोनों प्रकार के प्रभाव हैं।

भारत और विश्व में जनसंख्या वृद्धि की स्थिति

- संयुक्त राष्ट्र के एक डेटा के अनुसार, दुनिया के आधे से अधिक देशों में जनसंख्या वृद्धि दर में प्रतिस्थापन दर की तुलना में कमी आ रही है और शायद पहली बार दुनिया की जनसंख्या वृद्धि दर सदी के अंत तक शून्य होने का अनुमान है।
- इसके अलावा हाल ही में ब्लूमबर्ग की एक रिपोर्ट के अनुसार, कोविड -19 महामारी के चलते वैश्विक जनसंख्या में कम-से-कम एक दशक की गिरावट देखी जा सकती है।
- विशेषज्ञों का अनुमान है कि महामारी ने संयुक्त राज्य अमेरिका (यूएस) से चीन तक पहले से ही धीमी वैश्विक जन्म दर को और धीमा कर दिया है।

नोट :

- संयुक्त राष्ट्र के जनसंख्या अनुमानों के अनुसार, वर्ष 2021 और 2031 के बीच भारत की जनसंख्या में 1.09 के गुणक से वृद्धि होगी।
- वर्ष 2060 के बाद से भारत की जनसंख्या में गिरावट आनी शुरू हो जाएगी तथा प्रजनन दर प्रतिस्थापन स्तर से नीचे गिर जाएगी।

जनसंख्या नियंत्रण सिद्धांत

- माल्थस का सिद्धांत: ब्रिटिश अर्थशास्त्री माल्थस ने 'प्रिंसपल ऑफ पॉपुलेशन' में जनसंख्या वृद्धि और इसके प्रभावों की व्याख्या की है। माल्थस के अनुसार, 'जनसंख्या दोगुनी रफ्तार (1, 2, 4, 8, 16, 32) से बढ़ती है, जबकि संसाधनों में सामान्य गति (1, 2, 3, 4, 5) से ही वृद्धि होती है। परिणामत: प्रत्येक 25 वर्ष बाद जनसंख्या दोगुनी हो जाती है। हालाँकि माल्थस के विचारों से शब्दश: सहमत नहीं हुआ जा सकता किंतु यह सत्य है कि जनसंख्या की वृद्धि दर संसाधनों की वृद्धि दर से अधिक होती है।
  - हालाँकि माल्थस अंतत: गलत साबित हुआ क्योंकि कृषि प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भारत जैसे देशों ने शुद्ध खाद्य अधिशेष प्राप्त कर लिया है।
- बिग-पुश थ्योरी: हार्वर्ड के अर्थशास्त्री हार्वे लिबेंस्टीन ने प्रदर्शित किया कि कैसे जनसंख्या वृद्धि आय को कम करती है।
  - इस सिद्धांत के पीछे मुख्य आर्थिक तर्क यह था कि यदि प्रति व्यक्ति आय कम है तो लोग बचत करने के मामले में बहुत गरीब हैं।
  - चूँकि निवेश को बचत के समान माना जाता है और कम बचत का मतलब होगा कि अर्थव्यवस्था में वृद्धि नहीं होगी।

भारत में जनसंख्या नियंत्रण से जुड़े मुद्दे

- जनसंख्या से संबंधित सिद्धांतों ने प्राय: जनसंख्या अर्थशास्त्र के बारे में हमारी समझ को बढ़ाया है किंतु इनमें से कई सिद्धांतों में बाद में कई खामियाँ भी पाई गईं। यह निम्नलिखित तर्कों में परिलक्षित हो सकता है।
- उच्च जनसंख्या हमेशा खराब आर्थिक स्थिति का कारण नहीं होती है: यह आवश्यक नहीं है कि उच्च जनसंख्या अर्थव्यवस्था के लिये बुरी चीज़ हो। जनसंख्या नियंत्रणउपायों के निम्नलिखित संभावित परिणाम होंगे:
  - अर्थव्यवस्था हेतु काम करने के लिये पर्याप्त लोग नहीं होंगे।
  - एक बड़ी गैर-उत्पादक उम्र की बढ़ने वाली आबादी का समर्थन करने के लिये और पेंशन प्रदान करने के लिये सरकार के पास पर्याप्त संसाधन नहीं होंगे।
  - इससे गैर-औद्योगीकरण को बढ़ावा मिलेगा।
- जनसंख्या के वितरण संबंधी पहलू: वर्ष 1937 में जॉन मेनार्ड कीन्स ने "गिरती जनसंख्या दर के कुछ आर्थिक परिणामों" पर एक व्याख्यान दिया।
  - उनकी प्रमुख चिंता उन स्थानों पर निवेश की निम्न मांग से संबंधित थी जहाँ कंपनियों को उपभोक्ताओं की गिरती आबादी के कारण मांग में कमी का सामना करना पड़ता है।
- चीनी मॉडल: चीन ने 1980 के दशक में जनसंख्या नियंत्रण हेतु एक बच्चे के मानदंड को लागू किया लेकिन अपनी आबादी में वृद्ध लोगों की बढ़ती हिस्सेदारी (एक बच्चे की नीति के कारण) के साथ चीन ने पुरानी नीति को छोड़ दिया और शादीशुदा जोड़ों को अधिक बच्चे पैदा करने के लिये प्रोत्साहित किया।
- भारत में धार्मिक कारक: भारत में व्याप्त धार्मिक ध्रुवीकरण जनसंख्या नियंत्रण को और भी अधिक जटिल मुद्दा बनाता है।
  - भारत में एक विशेष अल्पसंख्यक वर्ग को लक्षित करने के लिये अक्सर (प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से) जनसंख्या विस्फोट जैसे तरीकों का उपयोग किया जाता है। जनसंख्या नियंत्रण उपाय सामाजिक समरसता को भी प्रभावित करेगा।
- गरीबों पर प्रभाव : कुल प्रजनन दर (टीएफआर) गरीबों में अधिक है और आय बढ़ने पर उसमें कमी आती है।
  - इस प्रकार पात्रता आधारित जनसंख्या नियंत्रण नीति गरीबों को नुकसान पहुँचाएगी, जिन्हें इस तरह की मदद की सबसे अधिक आवश्यकता होती है।
- पितृसत्ता: पितृसत्ता द्वारा संचालित सामाजिक व्यवस्था में लड़के को वरीयता देना उच्च प्रजनन दर का एक महत्त्वपूर्ण कारक है।
  - यह माना जाता है कि दो बच्चों की नीति को सीमित करने से कन्या भ्रूण हत्या आदि जैसी प्रथाओं के माध्यम से जनसंख्या के लैंगिक अनुपात पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

नोट :

आगे की राह:

- जनसांख्यिकीय लाभांश पर ध्यान देना ज़रूरी: भारत को बढ़ती जनसंख्या के बारे में चिंता करने के बजाय अपने जनसांख्यिकीय लाभांश के दोहन पर ध्यान देने की आवश्यकता है।
  - भारत इतिहास में एक ऐसे अनूठे क्षण में प्रवेश करने की ओर अग्रसर है जहाँ वह अपने आर्थिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये अपने जनसांख्यिकीय लाभांश का फायदा उठा सकता है।
  - सरकार के जनसंख्या अनुमानों के अनुसार, वर्ष 2021 में भारत की जनसंख्या का 53.6% हिस्सा 29 वर्ष से कम आयु का है। भारत की एक-चौथाई से अधिक जनसंख्या की उम्र 14 वर्ष या उससे कम है।
  - हमारे नीति निर्माताओं को भारत के जनसांख्यिकीय लाभांश को सकारात्मक तरीके से देखते हुए उसके दोहन पर ध्यान केंद्रित करने के लिये प्रयत्न करना चाहिये।

जनसांख्यिकीय लाभांश (Demographic Divided)

भारत में युवाओं की एक बहुत बड़ी संख्या ऐसी है जो अकुशल, बेरोज़गार, सेवाओं और सुविधाओं पर भार है तथा अर्थव्यवस्था में उनका योगदान न्यूनतम है। किसी भी देश के लिये उसकी युवा जनसंख्या यदि कुशल रोज़गारयुक्त और अर्थव्यवस्था में योगदान देने वाली है तो वह उसकी जनसांख्यिकीय लाभांश होती है।

कौशल विकास का उन्नयन: वर्तमान में भारत अपने युवाओं को सर्वोत्तम संभव अवसरों की गारंटी देने के समीप नहीं है।

- उदाहरण के लिये उच्च शिक्षा पर अखिल भारतीय सर्वेक्षण के आँकड़ों के अनुसार, भारत का उच्च शिक्षा क्षेत्र गहरी संरचनात्मक असमानताओं से जूझ रहा है।
- यह युवा आबादी अपने द्वारा अर्जित कौशल के आधार पर अत्यधिक उत्पादक या अनुत्पादक बन सकती है।

महिलाओं पर ध्यान केंद्रित करना: महिलाओं की शिक्षा प्रजनन दर के साथ-साथ पहले बच्चे के जन्म के समय माँ की उम्र दोनों के मामले में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। शिक्षा महिलाओं में प्रजनन दर और समय से पहले जन्म को कम करने में मदद करती है।

निष्कर्ष

भारत जनसांख्यिकीय संक्रमण के चरण में है जहाँ मृत्यु दर में गिरावट आ रही है और अगले दो से तीन दशकों में प्रजनन दर में गिरावट आएगी। इससे जनसंख्या वृद्धि में कटौती की गुंजाइश बनती है क्योंकि भारत में अभी भी सकारात्मक विकास दर है लेकिन हमारी जनसंख्या नीति को शून्य जनसंख्या वृद्धि के बड़े परिणामों को ध्यान में रखने की आवश्यकता है।

नोट :